राष्ट्रीय पवार क्षत्रिय महासभा प्रणित

राष्ट्रीय पवारी साहित्य कला संस्कृति मंडल

डॉ. ज्ञानेश्वर टेंभरे
अध्यक्ष
09096088436
Email - dbtembhare@gmail.com

श्री देवेंद्र चौधरी
सचिव
09284028714
devendrachaudhari31@gmail.com

उद्देश्य

१. पवारी (पोवारी / भोयरी) बोली को जतन, संवर्धन, आधुनिकीकरण अना प्रचार प्रसार करनो ।

२. पवारी लोक साहित्य संकलन अना आधुनिक साहित्य निर्मिती करनो।

३. हर साल 'पवारी साहित्य संग्रह' को प्रकाशन करनो।

४. पवारी कला, गीत, संगीत, लघुनाट्य, लोकनाट्य, सांस्कृतिक कार्यक्रम को साल मा कमसे कम एक बेरा आयोजन करनो।

५. उभरती पवारी साहित्य कला संस्कृति क्षेत्र की प्रतिभाइन ला प्रोत्साहन देनो।

६. हर साल 'राष्ट्रीय पवारी साहित्य कला सम्मेलन' को आयोजन करनो।

७. पवारी बोली, साहित्य, कला, संस्कृति ला राष्ट्रीय मंच प्रदान करनो।

८. पवारी साहित्य को जतन साथी 'पवारी ग्रंथालय' की स्थापना करनो।

९. पवारी इतिहास, भाषा, कला, संस्कृति, संस्कार इन अमूल्य सामाजिक मूल्यों को रक्षण करनो।

१०. पवारी कुलदेव देवी-देवता, रीतिरिवाज, सांस्कृतिक मूल्यों को प्रचार प्रसार करनो।

पवारी मा बोलो - पवारी मा लिखो

हमारे महापुरुष

डॉ. ज्ञानेश्वर टेंभरे

हमारे महापुरुष

(Hamare Mahapurush)

लेखक - प्रकाशक

प्रा. डॉ. ज्ञानेश्वर टेंभरे

अध्यक्ष

राष्ट्रीय पवारी साहित्य कला संस्कृति मंडल

४४, 'जिज्ञासा', विजयनगर, दक्षिण अम्बाझरी मार्ग, नागपुर - ४४० ०२२

लोकार्पण

राष्ट्रीय भर्तृहरि-विक्रम-भोज पुरस्कार पर्व

पांढुरना जिला छिंदवाडा - दि. ७ जुलाई २०१९

मुद्रक

श्री गजानन एन्टरप्राईजेस

२१, सुरेंद्रनगर, नागपुर ४४० ०१५

क्षत्रिय पवार गौरव गीत

।। वीर छंद ।।

अर्बुदगिरी - सतपुड़ा की धरती, नर्मदा-बैनगंगा की धार ।
युगों-युगों से है वो गाती, पवार शौर्य गाथा का सार ।।धृ।।

महर्षि परशुराम ने किया, क्रोध में क्षत्रियों का संहार ।
तब यह धरती हुई निक्षत्रि, मच गया सर्वत्र हाहाकार ।।
भारत भू पर रहा न कोई, उठा सके रक्षा का भार ।
यज्ञ आबू पर कर मुनियों ने, किया प्रगट 'क्षत्रिय पवार' ।।१।।

अग्निकुंड से प्रकट हुए तब, की युद्ध गर्जना 'मार-मार' ।
अग्निकुल के क्षत्रिय कहलाएं, कुल का नाम रखे परमार ।।
एक हाथ से गदा चलाएं, दूजे हात चली तलवार ।
दुष्टजनों का विनाश कर, जन-जीवन है दिया सँवार ।।२।।

कुलदैवत शिव, जगनारायण, माँ अम्बे महामाया नाम ।
शक्ति युक्ति उस माँ से मिल गई, भारत भू पर चमका नाम ।।
देवी सरस्वति प्रसन्न उन पे, साहित्य में दी प्रगति कराय ।
पवार तो सही क्षत्रिय थे ही, अब वो ब्रह्म-क्षत्रिय कहलाय ।।३।।

ईसा पूर्व पांच सौ में हुए, महाप्रतापी 'आदित्य पवार' ।
विक्रमादित्य भरतरी से हुई, उज्जैनी नगरी विख्यात ।।
आठवीं सदी में कृष्णराज ने, उज्जैनी का सम्हाला राज ।
दसवीं सदी में बैरिसिंह ने, बसाई सुंदर नगरी धार ।।४।।

मुंज- भोज ने बाहुबल से, दिया मालवा को साम्राज्य बनाय ।
ज्ञानप्रसार के लिए धार में, भोज ने दी भोजशाला बनवाय ।।
राज - वैभव, साहित्य कलाएँ, बन गई मालवा की पहचान ।
स्वर्णयुग भारत में लाया, धन्य धारा नगरी के पवार ।।५।।

सदियों से किए राज विदर्भ पर, मालवाधीश पवार सरदार ।
धार से आएं ज्ञानी जगदेव, चालुक्य राजा के दरबार ।।
विक्रमादित्य षष्टम ने बनाया, बन गए नगरधन के सरताज ।
शौर्य, वफादारी से बने फिर, जगदेव चांदा के महाराज ।।६।।

मुगलों के जब हुए आक्रमण, हो गए मालवा के बेहाल ।
चारो दिशा आक्रांत हो गई, बिखर गए मालवा के पवार ।।
पवारों ने छोड़ा धार को, आये नर्मदा के इस पार ।
कोई बसे बैनगंगा किनारे, कोई बसे वर्धा के ही पठार ।।७।।

***

पवार समाजरत्न

श्री रामूसेठ पवार

कर्मठ समाजसेवी, परमदानवीर, कर्मयोद्धा

संस्थापक अध्यक्ष, भारतीय पवार संघ पांढुरना, जिला छिंदवाडा
पूर्व उपाध्यक्ष, राष्ट्रीय पवार क्षत्रिय महासभा

(२६-१२-१९२८ - २३-०८-१९९९)

सादर समर्पित

पवार ध्वज वंदना

अर्बुदगिरि अग्निकुंड की इस में प्रज्वलित है ज्वाला ।
इस में तो गढ़कालिका ने भगवा रंग है डाला ॥
शिवशंकर महावीर शक्तिमान, बढे चलो अविराम ।
लहर-लहर लहराये पवार पताका,
शत-शत तुम्हे प्रणाम ॥१॥

यह पवार वीरों की विजय पताका, है हमें जान से प्यारी ।
त्याग बलिदान धर्म कर्म का है, हमें संदेश सुनाती ॥
समाज शक्ति देशभक्ति के गीत, गुणगुनाये निरंतर ।
लहर-लहर लहराये पवार पताका,
शत-शत तुम्हे प्रणाम ॥२॥

ध्वज हमें विक्रम-भोज स्वर्णिम युग की याद दिलाये ।
आबु-अवंति धारा नगरी की अलंकृत गाथा सुनाये ॥
जन-जन के हृदय में, स्पंदित करें स्वजाति अभिमान ।
लहर-लहर लहराये पवार पताका,
शत-शत तुम्हे प्रणाम ॥३॥

हम कांच नही कंचन है, ले लो अग्नि परीक्षा ।
अंगारों पर तपे हुए है, मिट्टी मात्र नही है चोला ॥
तुफानों से टकराते हम हैं, बनकर दृढ़ चट्टान ।
लहर-लहर लहराये पवार पताका,
शत-शत तुम्हे प्रणाम ॥४॥

है पुरुषार्थ प्रबल, सर नही कभी झुकाएंगे ।
श्री समृद्धि समग्र, चिर श्रम-परिश्रम से पायेंगे ॥
ध्वज बहाये क्रांति रक्त में, फिर रचेंगे नया इतिहास ।
लहर-लहर लहराये पवार पताका,
शत-शत तुम्हे प्रणाम ॥५॥

श्री भोज वंदना

हे अग्निवंशी, हे क्षत्रिय पवार
भोज,कोटि-कोटि तुम्हे प्रणाम ॥१॥

हे शिवभक्त, हे वाग्देवी वत्स
भोज,कोटि-कोटि तुम्हे प्रणाम ॥२॥

हे मालवाधीस, हे धारेश्वर
भोज,कोटि-कोटि तुम्हे प्रणाम ॥३॥

हे महावीर, हे दानवीर
भोज,कोटि-कोटि तुम्हे प्रणाम ॥४॥

हे कर्मयोद्धा, हे धर्मयोद्धा
भोज,कोटि-कोटि तुम्हे प्रणाम ॥५॥

हे महाकवि, हे महाज्ञानी
भोज,कोटि-कोटि तुम्हे प्रणाम ॥६॥

हे युगपुरुष, हे महापुरुष
भोज,कोटि-कोटि तुम्हे प्रणाम ॥७॥

अनुक्रमणिका

गीत

पवार कभी झुकता नही

पवार तिनका नही, आग का गोला है
पवार चिंगारी नही, अग्निकुंड की ज्वाला है
पवार भवानी को जल नही, खून चढ़ाता है
पवार कभी झुकता नही, आसमां झुकाता है ।।१।।

पवार जंग चढ़ी तलवार से युद्ध नही करता
पवार लंगड़े घोड़े पर दांव नही लगाता
पवार अंगुर नही लोहे के चने चबाता है
पवार कभी झुकता नही, आसमां झुकाता है ।।२।।

पवार तुफान बन चट्टानों से टकराता है
पवार वज्रबन अंगारों पर चलता है
पवार दीपक बन अंधियारा मिटाता है
पवार कभी झुकता नही, आसमां झुकाता है ।।३।।

पवार दान-दक्षिणा नही, परिश्रम पर ऐतबार करता है
पवार नसीब नही, अपने पुरुषार्थ पर नाज करता है
पवार बढायें जिधर कदम, आशियाना बन जाता है
पवार कभी झुकता नहीं, आसमां झुकाता है ।।४।।

अग्निवंशीय पवार हो तुम

अग्निवंशीय पवार हो तुम
अंगारों पर चलना सीखो ।
विक्रम भोज के वंशज हो तुम
तुफानों से टकराना सीखो ।।१।।

ज्योत प्रज्वल मशाल बन तुम
अंधकार को मिटाना सीखो ।
घर-घर रोशन हो कैसे
कुछ ऐसे दीप जलाना सीखो ।।२।।

जन-जन की अभिलाषा हो तुम
एक माला में गुंथना सीखो ।
अपना समाजोत्थान हो कैसे
कुछ ऐसा उद्यम चलाना सीखो ।।३।।

अपने भाग्य के निर्माता हो तुम
धैर्य-शौर्य से आगे बढना सीखो ।
स्वजनों, बिना सहकार नही उद्धार
साथ साथ कदम बढाना सीखो ।।४।।

प्राक्कथन

प्रथम ''राष्ट्रीय भर्तृहरि - विक्रम - भोज पुरस्कार'' के अवसर पर डॉ. ज्ञानेश्वर टेंभरेजी की अनूठी और अनुकरणीय पहल से पुरस्कार समिति उनके प्रति कृतज्ञ है। उल्लेखनीय है, डॉ.ज्ञानेश्वर टेंभरेजी इस अवसर पर ''हमारे महापुरुष'' शीर्षक से प्रकाशित पुस्तक के माध्यम से समाज जनों को हमारे पूर्वज विश्व वंदनीय नृपति व विद्वान भर्तृहरि, विक्रम, भोज, जगदेव के जीवन व कार्यो की जानकारी उपलब्ध कराकर समिति के कार्य में अमूल्य योगदान प्रदान कर रहे है।

हमारा इतिहास गौरवशाली रहा है। भर्तृहरि, विक्रमादित्य, भोज, जगदेव, इतिहास के देदिप्यमान तारे रहे है। इतिहास न केवल अतित की महान विभूतियों का साक्षात्कार कराता है, वह उनके कदम-कदम पर सभ्यता, संस्कृति, मानवता के विकास के लिए अनवरत संघर्ष की कहानी है। विगत काल की घटनायें, धारणायें, लोकजीवन, लोककला का ताना-बाना है। अतित का आईना, वर्तमान की आधारशिला तथा भविष्य के लिए मार्गदर्शन की दीपशिखा है। इतिहास हर जाति, सभ्यता का गरिमा-गौरवशाली चित्रण है। हमें गर्व है कि हम गौरवशाली इतिहास के र चयिता भर्तृहरि, विक्रम, भोज व जगदेव के वंशज हैं। वे हमारे प्रेरणास्त्रोत बनकर हमेशा शिखरागमन की ओर अग्रसर करते है। इतिहास हर जाति के विकास की कहानी है। वह हमें विपरित परिस्थितियों से लड़ना और विजय पताका फहराना सिखाता हैं। पवार तो अंगारों पर चलनेवाली तथा तुफानों से लड़नेवाली जाति है। शस्त्र व शास्त्र में निपुन है, तथा इसका साक्षी हमारा इतिहास है। राष्ट्र की मुख्य धारा बन प्रवाहित होना उसका मौलिक गुणधर्म है। हम भारतीय इतिहास के युगो-युगों से रचयिता रहे है और भावी गौरवशाली भारत की वास्तु - रचना के शिल्पकार की भूमिका निभाने दृढ़ संकल्पित है। इतिहास से चरित्र निर्माण का संदेश पाकर सशक्त व्यक्तित्व का निर्माण करें यह लेखक का लक्ष्य है।

यह पुस्तक प्रेरणापुंज बन जनसागर को आलोकित करेगी। भावी पीढ़ी को मेधावी प्रतिभा बनाने उर्जा प्रदान करेगी। युवा चरित्र निर्माण में अहम भूमिका निभायेगी।

यह पुस्तक डॉ.ज्ञानेश्वर टेंभरेजी अपने स्वयं के व्यय से प्रकाशित कर पुरस्कार समिति को उपलब्ध करा रहे है, जिसका लोकार्पण दि. ७ जुलाई को राष्ट्रीय भर्तृहरि-विक्रम-भोज पुरस्कार पर्व पांढुरना में किया जायेगा। इसकी प्रतियां उपस्थित जनों को वितरित की जायेगी। डॉ. टेंभरेजी की इस सहृदयता और सदासचरिता को सादर नमन!

भोपाल
दि.२४/०५/२०१९

वल्लभ डोंगरे
सतपुड़ा संस्कृति संस्थान, भोपाल,
सुखवाड़ा ई-दैनिक व मासिक,
राष्ट्रीय भर्तुहरि-विक्रम-भोज पुरस्कार समिति

जब तक न मिले मंजिल

चाहे सूरज तपता रहे, पाँव पग-पग जलते रहे ।
जब तक न मिले मंजिल, कदम दर कदम बढते रहें ।।१।।

चाहे बादल बरसते रहे, बिजली कड-कड चमकती रहे।
जब तक न मिले मंजिल, कदम दर कदम बढते रहें ।।२।।

चाहे राह में कांटे चुभते रहे, खून की अनवरत धारा बहे ।
जब तक न मिले मंजिल, कदम दर कदम बढते रहें ।।३।।

चाहेसाथ मिले ना मिले, लोग कुछ भी कहे ।
जब तक न मिले मंजिल, कदम दर कदम बढते रहें ।।४।।

समाज क्रांति की मशाल लिए, सर्वांगीण विकास की राह चलें।
जब तक न मिले मंजिल, कदम दर कदम बढते रहें ।।५।।

पुहमी बड़ा पुँवार

(भाटी गीत)

करि बन्दन सुख के सदन, गौरीनन्द गनेस ।
कथूँ सुजस पुँव्वार कुल, बर दे बुद्धि बिसेस ।।१।।
मालव धरनी मांह, धार नगर रजधानी ।
बीर तरवत पुँवार, कीरत जगदेव कहानी ।।२।।
विक्रमसा नरबीर, नगर उज्जेणि में नामी ।
मुन्ज अरू नृप भोज, चतुर्दस-विद्या ज्ञानी ।।३।।
जन्म लियो भरतरी जशा, देस भयों चहुँ दण्ड ।
गुरू गोरख सिर कर धर्यो, अमर नाम अखंड ।।४।।
पृथ्वी ठावी उज्जेणिपुर, धरा ठावि गढ़ धार ।
कुल वर्णु पूरू राय को, पुहमी बड़ा पुँवार ।।५।।

पवार इतिहास दर्पण

पवार उत्पत्ति - पवार उत्पत्ति पर विद्वानों ने निम्नांकित पौराणिक कथाओं का अध्ययन कर अपने सिद्धांत/मत/थ्योरी रखे है।

१.पद्मगुप्त मत - कवि पद्मगुप्त सम्राट मुंज के दरबार में राजकवि थे। उन्होंने मुंज का चरित्र 'नवसाहसांक चरित' काव्य की रचना की। इस काव्य में प्रमारों की उत्पत्ति का वर्णन मिलता है कि आबु पर्वत पर वशिष्ठ ऋषि निवास करते थे। एक दिन उनकी गौ नंदिनी (कामधेनू) को ऋषि विश्वामित्र छल-कपट से चुरा ले गये। तब महर्षि वशिष्ठ ने आबुपर्वत पर अग्निकुंड में आहुति व मंत्रोपचार से दिव्य पुरुष उत्पन्न किया तथा उसने महापराक्रम से नंदिनी गौ को विश्वामित्र के कब्जे से छुड़ाकर महर्षि वशिष्ठ के स्वाधिन किया। महर्षि वशिष्ठ ने प्रसन्न होकर उसका नाम 'प्रमर' (अर्थात शत्रु को मारनेवाला वीर) रखा तथा उसे समीपही अचलगढ़ की 'चंद्रावति' राजधानी से राज्य करने राज्याभिषेक कर चक्रवर्ती सम्राट होने का अभय वरदान दिया। परमार/पवारों की उत्पत्ति की यह कथा परमारकालीन शिलालेख बार-बार दोहराते हैं।

२. चंद वरदाई मत - कवि चंद वरदाई ने अपने अमर वीररस काव्य 'पृथ्वीराज रासो' में लिखा है कि मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम पूर्व महापराक्रमी परशुराम हुये। उन्होंने अपने पिता महर्षि जमदग्नि का सिर हैहय वंशी राजा सहस्त्रबाहू अर्जून के पुत्रों द्वारा अहंकार में विच्छेद से माता रेणुका के विलाप से क्रोधित होकर धरती (भारत भू) से हैहय वंश का २१ बार संहार कर उनके खून से पांच ताल - सरोवर भर दिये थे। बाद में पृथ्वी भारतभू को ऋषी कश्यप को दान कर दी। ऋषी कश्यप ने वशिष्ट को प्रबल क्षत्रियों के उत्पत्ति का कार्य सौंपा अतः क्षत्रियविहिन भारत भू की रक्षा के लिए लगभग ईसा पूर्व २५०० वर्ष पूर्व महर्षि वशिष्ठ के नेतृत्व में ऋषियों ने आबु पर्वत पर अग्निकुंड स्थापित कर यज्ञ किया व सामवेद के मंत्रोपचार के प्रभाव से 'प्रमार' (परमार) महावीर पुरुष का जन्म हुआ। उसे राजधानी चंद्रावति राजधानी से मालवा राज्य करने राजसिंहासन पर बिठाला गया। कवि चंद वरदाई ने यह वर्णन भागवत पुराण, स्कंद पुराण तथा परशुराम संहिता के आधार पर किया हुआ महसूस होता है।

३. भविष्य पुराण मत - भविष्य पुराण में प्रमार /पवार उत्पत्ति पर निम्नांकित श्लोक दिये गये हैं।

बिंदुसारस्ततोऽभवतु।
पितुस्तुल्यं कृत राज्यमशोकस्तन मोऽभवत् ।।४४।।
एतस्मिन्नेत कालेतुकन्यकुब्जोद्विजोत्तमः।

अर्बुदं शिखरं प्राप्यब्रह्माहोममथो करोत ।।४५।।
वेदमंत्र प्रभाववाच्चजाताश्चत्त्वारि क्षत्रियः ।
प्रमरस्सामवेदील च चपहानिर्जयुर्विदः ।।४६।।
त्रिवेदी चू तथाशुक्लाथर्वा स परिहारकः

भावार्थ यह है कि सम्राट बिंदुसार के पुत्र अशोक के काल में आबू पर्वत पर कान्यकुब्ज के ब्राह्मणों ने ब्रह्महोम किया और वेद मंत्रों के प्रभाव से चार क्षत्रिय उत्पन्न किए : सामवेद से प्रमर (परमार) कृष्णय यदुर्वेद से चपहान (चौहान), त्रिवेदी शुक्ल - यदुर्वेद से परिहारक (परिहार) व अथर्ववेदी (चु) चालुक्य या सोलंकी। ये चारों अग्निवंशी क्षत्रिय राजपुत कहलाये तथा सब ऐरावत कुल में उत्पन्न गजों पर आरूढ होते थे। इन लोगों ने बुद्ध धर्म के प्रखर प्रचारक सम्राट अशोक के वंशजों से युद्ध कर बौद्ध धर्म का नाश किया व हिंदु धर्म की फिरसे ध्वजा फहराकर हिंदू राष्ट्र स्थापित किया। डॉ.दशरथ शर्मा के अध्ययन अनुसार यह घटना सम्राट अशोक के पुत्र-पौत्र के काल में (२३२-२१५ ई.पू.) की है (पंवार वंश दर्पण)।

४. अबुल फजल मत - अबुल फजल कृत आईने अकबरी में कहा गया है कि करीबन ७६१, ई.पू. एक अद्भूत घटना हुई। इस काल में बौद्ध धर्म का आंधी की तरह प्रचार-प्रसार हो रहा था। हिंदू नृपतिगण अपने शस्त्र त्याग अहिंसा का मार्ग अपनाने लगे। सेनाशक्ति क्षिण हो रही थी, सीमायें आतंकी आक्रमणकारियों के लिए खुली थी। अत्याचार बढ रहे थे तब एक संत महाबाह ने अग्निमंदिर में यज्ञ कर अग्नि देवता से हिंदू धर्म की रक्षा के लिए प्रार्थना की तथा अग्निकुंड से धनजी/धूमराज नामक वीर ने प्रकट होकर हिंदू धर्म विधि-विधान से पूजा अर्चना में विघ्न डालनेवाले असुरों का सफाया किया। उसे परम महावीर 'परमार' नामसे संबोधित किया गया। कुल अग्निवंश कहलाया एवम् अचलगढ़ की चंद्रावती राजधानी से मालवा नरेश पदारूढ किया गया। आबू शिलालेख की ३३वी काव्यपंक्ति में धूमराज प्रथम परमार शासक 'उल्लेखित' किया गया है।

५ आधुनिक मत - आधुनिक इतिहासकार जैसे - जगदीश नारायण सिंह ''इतिहास का लोटा'' में लिखते है कि चंद्रवंशी राजा अग्निपाल आबु समीप चंद्रावती राजधानी से मालव पर राज्य करता था। उस समय बौद्ध अनुयायी आबू निवासी साधू-संन्यासीओं को हिंदू वैदिक धार्मिक पूजा-अर्चना में क्रुरता से व्यवधान डालते थे। अंत में त्रस्त होकर वशिष्ठ आश्रम के महामुनी ने अग्निकुंड में ब्रह्मोत्र कर मंत्रोपचार यज्ञाविधिविदान से स्थानीय चंद्रवशी राजा अग्निपाल को दीक्षा से शक्तिशाली बनाया। भगवान शिव व महामाया कालिका का वरदान दिलाया। उसने विघ्नकारी असुरों का सर्वनाश व

अग्निपाल वहीं से 'परमार' कहलाया व परमार वंश का इस तरह उद्‌गम हुआ। भांडारकर, गांगुली, भाटिया, ओझा, हिरालाल जैसे आधुनिक इतिहासकार मानते है कि बौद्धकाल में हिंदू राजाओं की सैनिक हिनता का लाभ उठाकर हून, शक, यवन जैसे विदेशी शासकों के आक्रमणों से लड़ने तत्कालीन सूर्यवंशी व चंद्रवंशी राजाओं को माउंट आबू पर महर्षिओं द्वारा यज्ञाविधि से दीक्षा दी, दैविक शक्ति दी। इस प्रक्रिया तहत अग्निवंशीय क्षत्रिय परमार/पवार, चौहान, परिहार, सोलंकी/चालुक्य इन रजपुत जातियों की उत्पत्ति हुई।

डॉ. दशरथ शर्मा ने पंवार वंश दर्पण में स्पष्ट किया है कि सतयुग व त्रेतायुग की कथायें निराधार है जिन्हे भविष्य पुराण भी नही मानता की उन युगों में अग्निवंशीय परमार/पवार जाति की उत्पत्ति हुई थी। यदि उन युगों में उत्पत्ति हुई होती तो महाभारत, रामायण आदि तत्कालिन संस्कृत, प्राकृत साहित्य में परमारों की उत्पत्ति का उल्लेख आता पर ऐसा नही है, अतः परमारों की उत्पत्ति अशोक के पुत्र-पौत्र के काल में हुई। सम्राट अशोक - २७३-२३२ ई.पू., सम्राट अशोक पुत्र कुणाल - २३२-२२६ ई.पू., सम्राट अशोक पौत्र दशरथ २२८-२२४ ई.पू., सम्राट अशोक प्रपौत्र-सम्प्रति २२४-२१५ ई.पू. ने शासन किया तथा परमार वंश की उत्पत्ति २३२-२१५ ई.पू. काल में हुई।

परमार/ पवार कुल के पर्यायी नाम

१) **ब्रह्मक्षत्र - ब्रह्मक्षत्र कुलीनः समस्त सामन्त चक्रनुत चरणः ।**
सकलसुकृतेका-पुंज श्रीमान मुन्ज - श्रीराम जयति ॥
(महाकवि हलायुद्ध : पिंगलासुत्रावलि)

२) **प्रमरः - प्रमरः सामवेदीक्त च चपहानिर्यजुर्विदः ॥४६॥**
त्रिवेदी चू तथा शुक्लोथर्वा स परिहारकः (भविष्य पुराण)

३) **पवार - श्रीमान पवार वंस्यो नृपतिंच विवुध मालवंराज्यं ।**
कित्वा विदात सुरवीर भवंतिपलमिदें त पापिना भूषरहा ॥२॥
(उदयपुर प्रशस्ति)

४) **प्रवाम - स्विस्ति। श्रीमाम् धारायाम् मेरूमहागिरि-तुंगश्रं-गोपमे प्रवामान्वये अनेक-समर-संघदृसाधित-शत्रुपक्ष-विस्तृतयसोध्वलित दिगन्तरालः ॥२॥** (कालवन अभिलेख)

५) **परमार - परमारकुलोत्तंसः कंसाजिन्महिमा नृपः।**
श्री भोजदेव इत्यासीन्नासीरकांत-भूतलः ॥५॥ (मांधाता अभिलेख)

६) **पुँवार - करि बन्दन सुख के सदन, गौरीनंद गनेस ।**
कथूँ सुजस पुँवार कुल, बर दे बुद्धि बिसेस ॥ (भाटी गीत)

७) **पंवार - पृथ्वी पंवारा तणी अणी पृथ्वी तणा पंवार ।**
एक आबुगढ़ बेसनी, दुजी उज्जैनी धा॥ (राजस्थानी लोकोक्तिः)
(कर्नल टॉड - हिस्ट्री ऑफ राजस्थान)

इस कुल को समय-समय पर ब्रह्मछत्र, प्रमरः, पवार, प्रवाम, परमार, पंवार, पुँवार सम्बोधित किया गया है। मराठों ने महाराष्ट्र में पवार (पश्चिम महाराष्ट्र) तथा पोवार (वैनगंगा तटीय झाडी पट्टी), भोयर-पवार (वर्धातटीय भोयर पट्टी) सम्बोधित किया है। अंग्रेजों ने उसे अपने उच्चारण अनुसार पोंवार-पंवार सर्वे किताबों तथा जिला गजेटिर में लिखा है। विभिन्न शिलालेख व ग्रंथों के अध्ययन के आधार पर सर्वप्रथम उपयोग में लायी जानेवाली प्रमरः, प्रवामा, पवार का भिन्नभिन्न बोली-भाषा, क्षेत्र अनुसार अपभ्रंश हुआ है अतः प्रमरः/परमार/पवार/पंवार/भोयर पवार एकही कुल के पर्यायी नाम है (गौरीशंकर ओझा - राजपुताने का इतिहास, धीरेंद्र गांगुली - दि हिस्ट्री ऑफ दी परमार डायनेस्टि, प्रतिपाल भाटिया - दी परमाराज ई.). डॉ. ओझा अनुसार परमार वंश (राजवंश) पवार जाति की विहिल शाखा से उत्पन्न कुल है। मालवा की बोलियां मारवाडी, मेवाडी, बांगडी, मालवी, रांगडी, हाडौती एक शब्द का अनेक रूपों में अपभ्रंश कर देती है और पवार शब्द भी पंवार, पँवार, पुंवार बन गया। (पन्नालाल बिसेन,१९८६.)

परमार राजवंश

भविष्य पुराण, प्रतिसर्गपर्व (प्रथम खंड) में प्राप्त विवरण अनुसार कलियुग के सैतीस सौ दस वर्ष व्यतीत होनेपर प्रमर नामक राजाने राज्य करना प्रारंभ किया। उन्हे महामद नामक पुत्र हुआ, जिसने पिता के शासनकाल के आधे समयतक राज्य किया। उसे देवापी नामक पुत्र हुआ, उसने भी पिता के ही तुल्य वर्षों तक शासन किया। उसे देवदूत नामक पुत्र हुआ, उसने भी अपने पितातुल्य राज्य किया। उसे गंधर्वसेन नामक पुत्र हुआ। उसने पचास वर्षतक राज्य किया तथा वह अपने पुत्र शंख का अभिषेक कर वन चला गया। शंख ने तीस वर्ष तक राज्य किया। गंधर्वसेन को वन में इंद्र ने वीरमती नामक देवांगा को पृथ्वीपर भेजा जिससे भतृहरि व विक्रमादित्य हुए। भर्तृहरि ने बारा वर्ष व विक्रमादित्य ने शक विदेशी आक्रमणकारियों का संहार कर विशाल साम्राज्य की स्थापना की व १०० वर्षतक राज्य किया। विक्रमादित्य स्वर्गवास होनेपर उनके पुत्र आदित्यवर्धन / विक्रमचरित ने ३० वर्ष शासन किया। विक्रमचरित का पुत्र रेवभट्ट व रेवभद्र का पुत्र शालिवाहन विक्रमादित्य जैसा ही शुरवीर था। उस ने शक, हून

आक्रमणकारियों को भारतभू से खदेड़ा व विक्रमादित्य के विक्रम संवत्सर जैसा ही शालिवाहन संवत्सर प्रारम्भ किया। फिर परमार वंश लम्बे अर्सेतक छिन्न-भिन्न होकर अंधकार युग में चला गया।

''राजा भोज'' नामक अंग्रेजी किताब के विख्यात इतिहासकार डॉ. पी. टी. एस. अय्यंगार ने पृष्ठ १७ पर स्पष्ट किया है कि "Paramara princes possessed the fort of Acalgarh near Mount Abu and ruled over the surroundings districts with 'Chandravati' as the capital. In the ninth century a line of Paramara princes became famous as the lords of Malva and rose to such hight of power that they became the protectors of the original paramaras of Acalgarh. This new dynasty was founded by Upendra, also called Krishnaraja."

अर्थात - परमार नृपतिगणों ने माउंट आबू समीप अचलगढ़ किले पर अपना आधिपत्य कर सभोवताल के जिलों पर 'चंद्रावति' को राजधानी बनाकर राज्य किया। नववी शताब्दी में 'परमार' राजवंश की एक शाखा मालवाधिश बनकर सुप्रसिद्ध हुई तथा इस तरह शिखर पर पहुंची कि वे मूल अचलगढ़ के परमारों के वारीस बन गये। यह नई वंशावली उपेंद्र जिसे कृष्णराज भी कहा जाता था, ने स्थापित की।

परमार नरेश उपेंद्र की वंशावली इतिहासकारों ने निम्नप्रकार से दी है

उपेंद्र (ई.७९१-८१८), वैरीसिंह प्रथम (ई.८१८-८४३), सीयाक प्रथम (८४३-८६८) वैरीसिंह द्वितीय (८६९-९१९), सीयाक द्वितीय (९१९-९४५), वाक्पति द्वितीय/मुंजदेव (९४५-९७४), सिंधुलराज (९७४-१०००), भोजदेव (१०००-१०५५), उदयादित्य (१०५५-१०७०), लक्ष्मणदेव (१०७०-१०८१), नरवर्मन (१०८१-११०४), यशोवर्मन (११०४-११३३), लक्ष्मीवर्मन (११३३-११४२), हरिश्चंद्र (११४२-११५७), विंध्यवर्मन (११५७-११७५), सुभातवर्मन (११७५-११९४) अर्जुनवर्मन प्रथम (११९४-१२१०), देवपाल (१२१०-१२१६), जयसिंह (जयतुगिदेव) द्वितीय (१२१६-१२३९), अर्जुनवर्मन द्वितीय (१२६१-१२८०), भोज द्वितीय (१२८०-१२१०), महलकदेव (१२१०-१३०६), जयसिंह चतुर्थ (१३०६-१३१०). अल्लाउद्दीन खिलजी द्वारा मांडुकिले पर विजय के साथ यह परमार वंश अस्त हो गया।

उपेंद्र से सिंधुलराज तक नरेशों की राजधानी उज्जैन थी। भोज प्रथम से अंतिम परमार शासक जयसिंह चतुर्थ तक राजधानी धार थी। परमार राजवंश के मालवा अतिरिक्त अन्य राज्य थे - बागड - जालौर - आबु तथा भिन्माल।

राजवैभव

- पवार वंश में महायोगी भर्तुहरि जैसे देदीप्यमान विद्वान, सम्राट विक्रमादित्य जैसे अखंड आशिया के सम्राट, राजा भोज व जगदेव जैसे रणयोद्धा, धर्मयोद्धा, ज्ञानयोद्धा, दानवीर तथा न्यायप्रिय प्रजाकल्याणकारी राजा हुए। उन्होंने भारत का इतिहास रचा। भर्तुहरि राजा से बैरागी बनकर उसने त्रैशतक तथा वाक्यपदीय, भट्टीकाव्य लिखकर अमर हो गया।

नृप भर्तुहरि बिद्वान भये, जिन पुत्र तिया सब त्या करे।
अनुराग तजी प्रभु पागि रहे, वह पार संसार से अम्र जिये ।।५।।
(पिरथी बडा पुँवार - कवि नरू)

उसी तरह सम्राट विक्रमादित्य ने विदेशी शक व हून आक्रमणकारियों का नाशकर विशाल साम्राज्य विक्रम संवत, नवरत्नराजदरबार व कला, साहित्य, धर्म, नाती, वैभव को शिखर पर पहुंचाया था।

तत्रोनेहस्युज्ञनियां श्रीमान्हर्षापरमिधः।
एकछत्र चक्रवर्ती विक्रमादित्य इत्यभूत ।। (राजतरंगिणी ३-१२५)

राजा भोज तो भारतीय मध्ययुगीन महानायक थे। उनकी स्तुति उदयपूर प्रशस्ति में दी गई है -

साधितं विहितं दत्तं-ज्ञातं तद्यन्न केनचित् ।
किमन्यत्काविराजस्य श्री भोजस्य प्रशस्यते ।।१८।।

अर्थात - जो उसने साध्य किया, जो आदेश किया, जो दिया, जो ज्ञात किया वह न कोई कर सका। कविराज भोज की इससे अधिक प्रशंसा क्या हो सकती है। विदर्भराज जगदेव पवार भी महायोद्धा, महादानी राजा थे। डोंगरगांव अभिलेख में श्लोक ११ में -

न स देशो न स ग्रामो न स लोको न स सभा
न तन्नक्तं दिवं यत्र जगद्वेवा न गीयते ।।१।।

अर्थात - ऐसा देश नही, ग्राम नही, लोक नही, सभा नही, ऐसी रात नही व दिन नही जहां जगदेव की प्रशंसा नही गाई जाती। उसी तरह कर्नल टॉड ने एन्टिक्विटिज एन्ड एनल्स ऑफ राजस्थान (पृ.१९०) पर अन्य जनश्रुति दी है -

जहं पंवार तहं धार है, और धार जहं पंवार ।
धार बिन पंवार नही और नही पंवार बिन धार ।।

मालवा मध्यभारत स्थानांतर

ओझा अनुसार मालवा राज्य पतन व मुगलों के अत्याचार के कारण मालवा

के पवार-परमार, राजपुताना, काठियावाड़, पवारगढ, हरियाना, उत्तराखंड के हिंदू राजा व मध्यभारत के मराठा, बख्त बुलंद की सेना में जुड़ गये। युगांतर में कृषक बन गये। इस सिद्धांत को अन्य इतिहासकार भाटिया ने भी समर्थन दिया है। अंग्रेज विद्वान शेरिंग व रसेल भी मानते है कि बैनगंगा-वर्धा तटिय पवार मालवा से इस क्षेत्र में आये व कृषि उद्योग से जुड़ गये। तथा वे धार परमारों.के ही वंशज है। उनकी शरीर रचना, उंचा माथा, घारी आँखे, गेहुंआ रंग, उंची काठी, उग्र स्वभाव, राजस्थानी परम्परायें उन्हे रजपूत दर्शाती है (रसेल तथा हिरालाल, कास्ट्स अँड ट्राईब्स ऑफ सेंट्रल इंडिया व बरार)।

पवार समाज : वर्तमान स्वरुप

इतिहास साक्षी है कि हम अग्निवंशी क्षत्रिय पवार हैं (शेरिंग रसेल)। आज हम पांच शाखाओं - १. बैनगंगा पवार, २.वर्धा पवार, ३. मालवा पवार, ४. रजपूत पवार तथा ५.मराठा पवार में विभक्त हुए है।

१. वैनगंगा तटीय (बालाघाट, सिवनी, गोंदिया, भंडारा जिलों के मूल निवासी) **पवारों के कुल-गोत्र :** १. अम्बुले २. कटरे ३. कोल्हे ४. गौतम ५. चौहान ६. चौधरी ७. जेयत्तवार/जैतवार ८. ठाकुर/ठाकरे ९. टेंभरे १०. डाला ११. तुरकर १२. पटले १३. परिहार १४. पारधी १५. पुन्ड १६. फरीद १७. बघेले १८. बिसेन १९.बोपचे २०. भगत २१. भैरम २२. भोयर २३. एड़े २४. रंजहार २५. रंदिवा २६. रहमत २७. राना २८. राऊत २९. राहांगडाले ३०. रिनाईत ३१. शरनागत ३२. सहारे २२. सोनवाने २४. हनवत ३५. हरिणखेडे, ३६. क्षीरसागर. इनमें से डाला रहांगडाले व राऊत रिनायत बन गये तथा फरीद, रंजहार, रंदिवा, रहमत मालवा में ही मुस्लीम बनकर रह गये।

२. वर्धा तटीय (वर्धा, नागपुर, छिंदवाडा, बैतुल जिलों के मूल निवासी) **पवारों के कुल-गोत्र :** १. गिरारे/गिन्हारे २.पन्ह्याड/पराडकर/परिहार ३. चोपडे ४.बडनगरे/बन्नगरे ५. घागरे ६. छेरके/शेरके ७. कडवे ८. बिरगडे ९.पाठे/पाठेकर १०. डोंगरदिये/डोंगरे ११. धारपडे/धारपुरे १२.चौधरी १३.माटे १४. फरकाडे १५. गागड्या/गाडगे १६. देशमुख १७. खौसी/खवसे/कौशिक १८. दिगरसे/डिगरसे १९. भादे २०. बारंगे २१. राउत २२. काटोले/गदडे २३. डोबले/ढोबाळे/ढवळे २४. किंकर/किनकर/किनेकर २५. रबडे, २६. कोरडे/कोडले २७. मानमोडे २८. सवाई २९. गोरे/दुरवी/दुर्वे/गोन्हे ३०. डाला ३१. उकार/ओंकार, ३२. उकडे/उकंडे ३३. उघडे ३४. कडवे ३५. करदाते/दाते ३६. करंजकर/केसाई /कसलीकर ३७. कामडी ३८. कालभोर/कालभुत ३९. कुडिके/कुईके/कुईले ४०. खपरे/खपरिया ४१.खसारे ४२. खुसखुसे/खसारे ४३. गाडरे ४४. गाकरे ४५. गोहिते ४६. चिकाने ४७. टोपले ४८.ठवरे/ठुसी ४९. ढोले ५०.

डहारे ५१. डंढारे/दंढारे ५२. देवासे ५३. धोटे ५४. धोंडी ५५. नाडीतोड ५६. पठारे/पेंधे/पिंजारे ५७. बरखडे/बरखेडे ५८. बार बोहरे ५९. बौंगने/बैगने ६०. बोबडे/बोबाट ६१. बोवाडे ६२. भुसारी ६३. मुन्ने ६४. रमधम ६५. राखडे ६६.रोडल्या ६७. लबाडे/लाइके/लाडक्या ६८. सरोध्या/सरोदे ६९. हजारे ७०. हिंगवे ७१. बिसेन ७२. बागवान/भोयर, इत्यादी।वर्तमान में इन कुलों के लोग पवार कुल लिखते है।

३. नर्मदा तटीय (राजापुर, शुजालपुर, रायसेन, विदिशा, देवास जिलों के मूल निवासी) **पवारों के कुल-गोत्र :** १.डुसरिया, २.केलवा, ३.बलोदिया, ४.बिजानिया, ५.जवनिया, ६.रोजडिया, ७.पडिहार, ८.गिलानिया, ९.सिसोदिया, १०.मउडिया, ११.साकलिया, १२.सिलोटिया, १३.भमानिया, १४.देवलिया, १५.आंजनगाया, १६.कोहेडिया, १७.चावडा, १८.धनानिया, १९.हाडा, २०.डडालिया, २१.पडानिया, २२.सिलोटिया, २३.जेष्ठिया, २४.बिजोनिया, २५.लखेरिया, २६.मौजा, २७.कारया, २८.खिची, २९.सिंघानिया, ३०.धुंधानिया, ३१.देवडिया, ३२.मकवाना, ३३.धरोलिया, ३४.छछोडिया, ३५.देस्तिया, ३६.सुलतानिया, ३७.सिलतारिया, ३८.बरोड, ३९.कुशसानिया, ४०.कायरिया, ४१.खुटपलिया, ४२.पगारिया, ४३.बिजौलिया, ४४.सोनगरा आदि.वर्तमान में अधिकांश कुलों के लोग पंवार या परमार लिखते है।

४. रजपूत पवार / परमार (राजस्थान, गुजरात, यु.पी. पंजाब, हरियाणा उ.खंड आदि प्रदेशों में निवासरत) **के कुल, (गोत्र-वशिष्ठ)** १. मोरी २. सोडा ३. सांकला ४. खैर ५. उमरा ६. सुमरा ७. वेहिल ८. बिहिल ९. मेपावत १०. बुल्हर ११. काबा १२. ऊमट १३. रेहवर १४. तुण्डा १५. सोरटिया १६. हरेलके १७. चोंदा १८. खेजूर १९. सुगडा २०. बरकोटा २१. पूनी २२. सम्पल २३. भीवा २४. कालपुसर २५. कलमोह २६. कोहीला २७. पूसया २८. कहोरिया २९. धुंदा ३०. देवा ३१. बरहर ३२. जीप्रा ३३. पौसरा ३४. धुंत्ता ३५. टिकुंबा ३६. टीका. अधिकांश लोग परमार या पॅवार लिखते हैं।

५. मराठा पवार (पश्चिम महाराष्ट्र के निवासी) **कुर** (सरनेम) **(गोत्र - वशिष्ठ) :** १. निंबालकर २. विश्वासराव ३. किल्लेदार ४. दळवी ५. जगदाळे ६. कोंडगे ७. पोकळे ८. नातु ९. सावंत १०. धनावडे ११. शेटय़ेपाटील १२. आमोटे १३. उडाले १४. ओघे १५. कणसे १६. कळसकर १७. केडगे १८. कोघे १९. कौसतुभे २०. खरनार २१. घुगर २२. चांदणे२३. डुंबरे २४. दलपे २५. दुरव २६. धवळे २७. धारराव २८. नलकांडे २९. परमार ३०. पतआ ३१ पांडभवर ३२ पौरव ३३.बन ३४. बंह ३५. बंड ३६. बानगडे ३७. वोघे ३८. भवाल ३९. भूजबळ, ४०. भुसारे ४१. रोकडे ४२. मळे

४३. मढे ४४. मरमडे ४५. माळवडे ४६. कडे ४७. लांडगे ४८. वाघचौरे ४९. वागजे ५०. सिंघिल ५१. घोसाळकर.

रजपूत पवारों के ३६ कुल है, मराठा पवारों के ५०-५२ कुल है। वे अपने आप को वशिष्ठ गोत्री मानते है तथा इस कारण उनके अपने-अपने कुलों में शादी-ब्याह संबध वर्जित है। अतः सभी ३६ कुलीन रजपूत पवार/परमार अन्य गोत्री सूर्य तथा चंद्रवंशी क्षत्रियों से विवाह सम्बन्ध बनाते है। इसी तरह मराठा पवारों के ५०-५२ कुल आपस में विवाह सम्बन्ध वर्जित होने से, एक गोत्री होने से मराठा जाति के अन्य ९५ कुलों एवं गोत्रीयों से विवाह सम्बन्ध करते है। रजपूत पवार अपनी जाति रजपुत तथा मराठा पवार अपनी जाति मराठा मानते है न कि पवार। अर्थात अब हम तीन जातियों में बट चुके है - १. रजपुत, २. मराठा तथा ३. पवार।

क्षत्रिय पवार जाति वर्तमान में तीन समुहों में बटी हुई है - वैनगंगा तटीय (झाडी पट्टी) पवार, वर्धा तटीय (भोयर पट्टी) पवार तथा नर्मदा तटीय (मालवा पट्टी) पवार / परमार। बैनगंगा तटीय पवारों के ३२-३६, वर्धा तटीय पवारों के ७२ तथा नर्मदा तटीय पवारों के ५२ कुल है तथा वे एक-दुसरे कुलों में उन्ही को विभिन्न गोत्र मानकर शादि-ब्याह सम्बंध बनाते है। इस कारण रजपुत व मराठा पवार इन तीनो पवार जाति समुहों को स्वगोत्री विवाह करनेवाले मानते हैं। रजपुत, मराठा स्वयम् को शुद्ध वशिष्ठ गोत्री व हम पवारों को वशिष्ठ आंतर-गोत्री मानते हैं। हम अपने कुलोंको ही कश्यप / वशिष्ठ गोत्र के उपगोत्र मानते है। पवार जनमानस का वर्तमान स्वरूप नीचे चित्रांकित किया गया है -

***
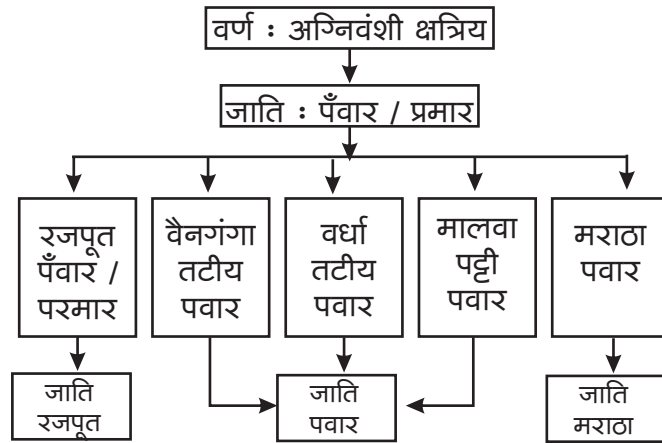
महायोगी भर्तृहरि

परिचय : भर्तृहरि की जीवनी का बोध हमें हरिहर कृत नाटक 'भर्तृहरिनिर्वेद' से मुलतया प्राप्त होता है, कुछ जानकारी आधुनिक रचनायें - एच. जी. कोवर्ड कृत "भर्तृहरि," (१९७६), सरोज भाटे कृत "भर्तृहरि - दार्शनिक, एवम् भाषाविद्" (१९९४) तथा मन्नानारायण मूर्ति कृत "भर्तृहरि - एक व्याकरण शास्त्री " (१९९७) आदि प्रदान करती हैं।

भर्तृहरि कौन थे? उज्जैन के पवारवंश के महाराजा थे, नाथपंथ के योगी थे, महाकवि थे और एक कदम आगे बढ़ कर हम कह सकते है कि वे इ.पू. प्रथम शतक के दार्शनिक थे, जो भारतीय संस्कृति एवम् जीवन-दर्शन के दैदिप्यमान सितारा बन कर अनन्त काल से मानव समाज को प्रेरणा दे रहे हैं। विद्वानों का मानना है कि उस काल में यदि कालिदास अवतरित हुये न होते तो भर्तृहरि महाकवि हुये होते। यह हमारे समाज के लिये बड़े दूर्भाग्य की बात है कि हम इस महान विभूति की स्मृति खो बैठे जिन्हे उनके द्वारा लिखित अमर कृति 'त्रय शतकम्' - १. शृंगारशतकम्, २) नीतिशतकम् तथा ३) वैराग्यशतकम् में संकलित अनमोल ज्ञान भंडार के कारणवश सारे विश्व का आदर प्राप्त है। आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व मालवा प्रान्त की राजधानी उज्जैन पवार वंशी महाराजा भर्तृहरि की थी। गंधर्वसेन (महिंद्रादित्य) के पुत्र थे और जगविख्यात सम्राट विक्रमादित्य उनके छोटे भाई थे। उनका ईसा पूर्व १०४ में रानी सरस्वती से जन्म हुआ था।

महायोगी भर्तृहरि की शिक्षा संस्कृत के प्रगाढ़ व्याकरणशास्त्री आचार्य वासूरत के आश्रम में हुई। मुलतया वे शिवभक्त तथा बाद में बाबा गोरखनाथ के शिष्य बने। उज्जैन का राजपाट पाने के पहले वे राजा मैत्रक वलभीराज्य (गुजरात) में मंत्रीपद पर कार्यरत थे। बाद में राजसिंहासन भर्तृहरि से विक्रमादित्य को कैसे प्राप्त हुआ? तथा महाराजा भर्तृहरि बैरागी कैसे बने? यह अपने आप में एक रोचक कहानी है। राज-पाट त्यागने के बाद उन्होंने उज्जैन निकट गुफा में सारा जीवन संन्यासी बनकर बिताया एवम् साहित्य साधना की। यह गुफा 'भर्तृहरि गुफा' के नाम से प्रख्यात हुई। आज भी उसका सजीव अस्तित्व बना हुआ हैं। उन्होंने राजस्थान के जयपूर समीप अलवर मे समाधी ली तथा वहाँ भर्तृहरि मंदिर है। नाथ पंथी साधूओं की देखरेख रहती है।

राजा बना बैरागी - भर्तृहरि ने ई.पू. ६८ से ई.पू. ५६ तक राज किया। महाराजा भर्तृहरि की तीसरी महारानी पिंगला सौन्दर्य संपन्न, लावण्यवति, मनमोहिनी किन्तु परगामिनी

थी । वह चालाक, मक्कार और दुश्चरित्रा थी । इसका पता विक्रम को लगा। उसने महाराजा भर्तृहरि को डरते डरते इसकी जानकारी दी । किन्तु पिंगला के मायावी यौवन रूप-रंग में फँसे महाराजा भर्तृहरि ने इसे मात्र अफवाह समझा और पिंगला को सब कह डाला । पिंगला उलट कर महाराजा के कान विक्रम के दुःश्चरित्र की झूठी कहानियों से भरती रही । वह आखिर अपने षडयन्त्र में सफल हुई और राजा भर्तृहरि ने विक्रम को अपने राज्य से बाहर निकाल दिया।

कुछ वर्ष पश्चात एक ब्राह्मण ने लम्बी तपस्या से प्राप्त 'अमर फल' राजदरबार में जाकर महाराजा भर्तृहरि को सौंपा । महाराजा ने खुश होकर ब्राह्मण को बहुतसी स्वर्ण मुद्राएं दी । महाराजा ने उस अमर फल को न खाते हुये अपनी प्रियतम रानी पिंगला को दिया कि वह अमर हो जाय और उसका सौंदर्य सदा बना रहें। पिंगला ने उस फल को स्वीकार तो कर लिया किन्तु स्नान पश्चात खाने का बहाना किया । उसने महाराजा के जाते ही अपने प्रेमी सरदार (दरोगा) को बुलाया और उसे वह 'अमर फल' दे दिया ताकि उसे आजन्म यौवन-सुख मिलता रहे । दरोगा ने फल पाकर क्षिप्रा में स्नान कर उसे ग्रहण करने का झूठा वचन दिया और उसे लेकर अपनी खास प्रेमिका, एक वेश्या, के पास पहुंचा । वह चिर स्थायी यौवन पाकर अमर बनी रहें इस लक्ष्य से उसने वह 'अमर फल' उसे दिया । किन्तु वेश्या अपने पापों से पहले से दुःखी थी । उसने इस फल को सदाचारी व परोपकारी महाराजा भर्तृहरि को देकर प्रायश्चित करना उचित समझा । राज दरबार पहुचकर बड़े आदर भाव से उसने वह फल महाराजा को भेट दिया । फल देखते ही भर्तृहरि के होश उड़ गये । उन्होंने फल को उसी क्षण खा लिया किन्तु उनकी आंखे खुल गयी । उन्हें पिंगला के विश्वासघात पर बड़ी आत्मग्लानि हुई । सदमा ऐसा पंहुचा कि उन्होंने बैराग्य लेने का दृढ़निश्चय किया । अपने लघुभ्राता विक्रम को सेना द्वारा ढूंढ निकाला एवम् राजसिंहासन पर उसे बिठा कर स्वयं योगी बन, वन में निकल पड़े । इसे उन्होंने स्वयम् 'नीति शतक' श्लोक २ में लिखा है कि ---

यां चिन्तयामि सततं मयि सा विरक्ता,
साप्यन्यमिच्छिति जनं स जनोऽन्यसक्तः ।
अस्मत्कृते च परिंतुष्यति काचिदन्या,
धिक तां च तं च मदनं इमां च मां च ।।

अर्थात - मै जिसे सदा चाहता हूं वह मुझे नही चाहती, दरोगा (दूसरे पुरुष) को चाहती है । वह पुरुष रानी को नहीं चाहता और दूसरी अन्य स्त्री को चाहता है । वह स्त्री उसे न चाह कर मुझे चाहती है । इसलिए उस रानी को धिक्कार है ! उस दूसरे पुरुष

(दरोगा) को धिक्कार है!! उस कामदेव को धिक्कार है !!! जो यह सब कर्म कराता है ।

भर्तृहरि की रचनाएँ :- वैसे भर्तृहरि के किस्से आज भी लोगों के जुबान पर लोकगीतों के रुप में गूंजते है । भर्तृहरि-गोपीचन्द 'मामा भांजे' के गीत उत्तर भारत में आज भी प्रचलित हैं । कुछ किताबे भी उपलब्ध है । नाथ पंथ के साहित्य में भी भर्तृहरि की रचनायें मिलती है किन्तु विद्वानों ने भर्तृहरि द्वारा लिखित तीन संस्कृत-काव्यों को मान्यता प्रदान की है । ये शतक है - १.वैराग्य शतक २. नीति शतक तथा ३. श्रृंगार शतक। तीनों शतकों में सौं-सौं श्लोकों का संकलन है तथा उनका सामाजिक जीवन से सीधा सम्बन्ध है । उन्होंने इन शतकों में जीवन मूल्यों का जो सार प्रस्तुत किया है वह त्रिकाल सत्य है, निरंतर प्रेरणा-स्त्रोत है । उसी तरह चिनी यात्री यी जींग (Yi Jing) ने इ.स. ६७० में भारत भ्रमण किया था और अपने संग्रह Termenes Antiqucm में महायोगी भर्तृहरि के ग्रंथों का विवरण दिया हैं । त्रयशतकों के अलावा वाक्यपदीय (संस्कृत पद्य व्याकरण) शब्द मिमांसा एवम् भट्टीकाव्य (कविता संग्रह) का वर्णन हैं । इन में त्रयशतकम् अजरामर संस्कृत रचना है। भर्तृहरि का टिका सुभाषित संग्रह भी उनकी रचना मानी जाती है।

१. वैराग्य शतक - यह काव्य-संग्रह परमार्थ जीवन से सम्बधित है जो जीवन का अंतिम लक्ष्य है तथा मानव को स्वर्ग एवम् अमरत्व की ओर खिचता है । उन्होंने एक श्लोक में कितनी अच्छी तरह से मानव-जीवन की सत्य अनुभूति की है -

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता, तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः ।
कालो न यातो वयमेव याता, तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः ।।

अर्थात - हम विषयों को न भोग सके, विषयों ने ही हम भोग लिया । हम तप नही कर सके पर तप ने ही हमें तपा लिया । काल व्यतीत न हुआ, किन्तु हम ही व्यतीत हो गये, तृष्णा समाप्त न हुई, किन्तु हम ही समाप्त हो गये । अन्य श्लोक में उन्होंने यथार्थ भरे शब्दों में उपदेश किया है कि -

आयुः कल्लोललोलं कतिपय दिवसस्थायिनी यौवन
श्रीरर्था संकल्पकल्पा धनसमयतडिद्विभ्रमा भोगपुराः ।
कण्ठाश्लेषोदगूढं तदपि चन, चिरं यत्प्रियाभिः प्रणीतं
ब्रह्मण्यास्त्रक्त चित्ताभवतभवभयाम्भोधि पारतरीतुम् ।

अर्थात - आयु जलतरंग के समान चंचल है, जवानी कुछ ही दिनों के लिये रहा करती है, धन मानसिक कल्पना के समान अस्थिर है, वासना भी वर्षाकालीन विद्युद्विलास की तरह चंचल है, प्रेयसी का सुख भी चिरस्थायी नही है, इसलिये भव-भय रुपी समुद्र से पार होने के लिये परमात्मा में मन लगाओं ।

२. नीतिशतक - यह शतक सामाजिक जीवन से जुड़ा हुआ है। उन्होने यह भी शिक्षा दी है कि नीति जीवन की आधार शिला है तथा जीवन में चिरन्तन सत्य का अविर्भाव भरा हुआ है। उनका सामाजिक चिंतन कितना सटीक है उसकी झलक हमें इस श्लोक में मिलती है -

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।

ज्ञानलबदूर्विदग्ध ब्रह्मापि तं नर न रन्जयतिं ॥

अर्थात :- नासमझ सहज में प्रसन्न किया जा सकता है। समझदार उससे भी सहज में प्रसन्न किया जा सकता है। परन्तु जो न तो समझदार है न नासमझ ऐसे मनुष्य को ब्रह्मा भी सन्तुष्ट नही कर सकता।

उसी तरह उन्होंने विद्या का महत्व इन मार्मिक शब्दों में समझाया है -

विद्या नाम नरस्य रुपमाधिकंप्र च्छन्नगुप्तं धनं

विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरुणां गुरुः।

विद्या बन्धुजनों विदेशगमने विद्या परा देवता,

विद्या राजसु पूज्यते न ही धन विद्याविहीनः पशुः ॥

अर्थात - विद्या ही मनुष्य का सौन्दर्य और गुप्तधन है। विद्या ही भोग, यश और सुख को देनेवाली है। विद्या ही गुरुओं का भी गुरु है। परदेश में विद्या ही बन्धु हैं। विद्या परा देवता है। विद्या ही राजस-गुण कें रुप में पूजी जाती है, धन नही। अतः विद्याहीन नर निरा पशु है।

अन्य श्लोक में उन्होंने धन के प्रति कहा हैं -

दान भोगो नाशस्तिस्त्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।

यो न ददाति न भुडक्तेतस्य तृतीया गतिर्भवति ॥

अर्थात - धन की तीन ही गति हुआ करती हैं। दान, भोग और नाश। जो व्यक्ति न दान करता है, न उपभोग करता हैं, उसकें धन की तीसरी गति हुआ करती हैं।

उन्होंनें पारिवारिक सम्बन्धों की यथार्थता इन शब्दों में प्रतिपादित की है -

यःप्रीणयेत्सुचरितैः पितरं स पुत्रो,

यद्भर्तुरेव हितमिच्छति तत्कलत्रम्।

तन्मित्रमापदि सुखे च समक्रियं यद्,

एतत्त्रयं जगति पुण्यकृतो लभन्ते ॥

अर्थात - जो अपने आचरणों से पिता को प्रसन्न करता हैं वही पुत्र है, जो अपने पति का हित नित्य चाहा करती है, वही स्त्री है, जो सुख और दुःख दोनों में एकसा व्यवहार

रखता है वही मित्र है। संसार में ये तीन बातें पुण्यात्माओं को ही प्राप्त हुआ करती है। राजनीति जो छल कपट से लिप्त हो उनकी नजरों में वेश्या के समान है -

सत्याऽनृता च पुरुषा प्रियवादिनी च,

हिस्त्रा दयालुरपि चार्थपरा वदान्या।

नितव्या प्रचुरनित्यधनागमा च,

वाराडगनेव नपनीतिरनेकरुपा ॥

अर्थात - कभी सत्य, कभी मिथ्या, कभी कठोर, कभी मधुर वचन बोलनेवाली, कभी घातक, कभी दयालु, कभी स्वार्थरत, कभी परोपकारी, नित्य व्यय या आय करानेवाली राजनीति वेश्या की तरह हुआ करती है।

३. श्रृंगार शतक - यह काव्य नारी सौंदर्य का वर्णन करता है जो मानव जीवन के यौवन काल की स्वर्णिम दशा रही है। स्त्री एवम् पुरुष के अबाधसम्बंधो की लौहकड़ी हैं वह मानव जीवन का सौंदर्य हैं। योग और भोग का समन्वय कराती है। उनकी यह अमर कृति कालीदास तथा भवभूति के समकक्ष मानी गई है। उनकी नजर में युवतियों का रंगरुप उनका साक्षात् भूषण हैं।

वक्त्रं चन्द्रविकासी पंकजपरीहासक्ष में लोचने।

स्वर्णमपाकरिष्णु रलिनीजिष्णुः कचानान्चयः ॥

वक्षोजाविभ कुम्भसंभ्रमहरोगुर्वी नितम्बस्थली।

वाचांहरि च मादवयुवतिषु स्वाभाविकं मंडलम् ॥

अर्थात - चंद्रमा सा खिलता हुआ मुख, कमल को सजानेवाले नेत्र, सुवर्णसा कांतिमय शरीर, भ्रमरियों को जीतनेवाले काले केश, हाथों के कुम्भ स्थल जैसा सुशोभित वक्ष, मन मोहिनी वाणी की मधुरता आदि युवतियों के अकृत्रिम भूषण है और इसी सौं दर्य के कारण नारी के अभाव में पुरुष अपने आपको अन्धकार में खोया हुआ अनुभव करता है।

सती प्रदीप सत्यग्नौ सत्सु ताराखीन्दुषु।

विना में मृगशावाक्ष्या तमोभूतमिंद जगत ॥

अर्थात - अंधेरे का नाश करने वाले दीप, अग्नि, नक्षत्र, सूर्य और चन्द्रमा आदि के रहते हुये भी यदि मेरी मृगनयनी मेरे पास नही है तो मेरे लिये सारा संसार अंधकारमय है।

उनका स्पष्ट मानना है कि नारी श्रृंगार, पुरुष के पतन का कारण कदापि नही है। उस का कारण तो मुख्यतया कामाग्नि है जो पुरुष की स्वयम् कमजोरी है।

तावन्महत्त्वं पाण्डित्यं कुलीनत्वं विवेकिता।

यावज्ज्वलति नाडगेषु हतः पंचेषुपावकः ।।

अर्थात - तभी तक बड़प्पन, पांडित्य, कुलीनता और विवेक हुआ करता है, जब तक हृदय में कामाग्नि की ज्वाला नहीं धधकती । उन्होंने सत्य का आभास इन शब्दों में दिलाया है।

सत्यत्वे न शशांग एष वदनोभूतो न चेंदीवरद्वंद्वं,
लोचनतां गतं न कनकैरप्यंगःयष्टिः कृता ।
किन्वेब कविभिः प्रतारितसनस्तत्वे बिजानन्नपि,
त्वडमांसोस्थिमय वपुर्मृगदृशां मन्दोजनः सेवते ।

अर्थात - सत्यता यह है कि स्त्रीमुख न तो चन्द्रमा हैं, उनकी आंखे न तो कमल है न तो इनकी देह ही सुवर्ण है, फिर भी कवियों की अतिशयोक्ति में बहककर मदमति पुरुष धाम, मास और हड्डी से बने स्त्रियों के शरीर के भूखे रहते है और नष्ट हो जाते है ।

अन्त में भर्तृहरि त्रयशतकम् कें अध्ययन से मानव जीवन दर्शन का सार हमारे मन-मस्तिष्क में समा जाता है जो न केवल उच्च कोटि का साहित्य है किन्तु मानव जीवन का शाश्वत प्रेरणा स्त्रोत भी है ।

यह कितनी विडंबना है कि भर्तृहरि सम्पूर्ण जगत में अमर हो गये किन्तु जिस जाति में उन्होंने जन्म लिया, कालान्तर में, वह जाति-समुदाय ही उन्हें भूल गया ।

भर्तृहरि गुंफा उज्जैन (म.प्र.)　　- भर्तृहरि मंदीर अलवर (राजस्थान)

सम्राट विक्रमादित्य

प्रथम विक्रमादित्य को विशाल भारत साम्राज्य का जनक, हिंदु राष्ट्र निर्माता, महायोद्धा, ज्ञान योद्धा, कर्मयोद्धा एवं धर्मयोद्धा रूपी श्रेष्ठतम हिंदु आदर्श राजा माना गया है । उनका नवरत्न दरबार, विक्रम संवत्सर, राज सिंहासन, प्रजावात्सल्य, अचुक न्यायी गुणी राजा के रूप में इतिहास आज भी आदर से याद किया जाता है । विविध गुणों से अलंकृत प्रतिभा की वजह 'विक्रमादित्य' एक विलक्षण उपाधि बन गई एवं अनेक राजाओं ने उसे सर्वोच्च सम्मान के रूप में शिरोधार्य किया । इनमें उल्लेखनीय है गुप्तवंशीय सम्राट चंद्रगुप्त द्वितीय (३७५-४१३ ईसवी), चालुक्यवंशीय जयसिंह षष्टम् विक्रमादित्य (१०९३-११४२ ईसवी), तुअर वंशीय हेमचंद्र 'हेमू' (१५०१-१५५६ ईसवी) आदि ।

भविष्य पुराण, स्कंधपुराण, कथा सरित्सागर, कथासप्तशती, बृहत्कथा, द्वात्रिंश्वत्युत्तालिका, पुरुष परीक्षा, शनिवार वृत्त कथा, कुछ जैन साहित्य तथा कर्नल टॉड की एनल्स ऑफ एन्टिक्विटीज आदि ग्रंथों से विक्रमादित्य प्रथम पर जानकारी प्राप्त होती है । कहीं कहीं भ्रम की स्थिति भी निर्माण होती हैं । यहां सर्वमान्य अधिकृत ऐतिहासिक प्रमाणों पर आधारित जानकारी दी जा रही है ।

प्रथम अग्नि समान प्रखर पवार कुलीन 'परमार' नामक पवार वीर ने आबु-अचलगढ किला समीप की चंद्रावती राजधानी से राज्य शासन प्रारम्भ किया । इसी वंश के छटवी पीढी में 'आदित्य पवार' ने अपनी राजधानी उज्जैन स्थानांतरित की एवं विशाल मालवा साम्राज्य की स्थापना की । उसका राज्यकाल २९२-२८६ ईसा पूर्व माना गया है। एक सदि पश्चात इस वंश में 'गंधर्वसेन' नामक राजा हुआ । वह 'महिंद्रादित्य' नाम से भी जाना जाता था। वह एक जैन साध्वी 'सरस्वती' के रुप-सौंदर्य के मोह में फंस गया एवं उसका अपहरण कर उससे जबरन शादी कर ली । यह समाचार पाकर साध्वी का भ्राता महामुनि 'कालिकाचार्य' अत्यंत क्रोधित हुआ । इस काल में भारत के चार राज्योंपर विदेशी आक्रमणकारी 'शक' (ईरानी आदिम अश्वारोही भटकी जाति) क्षत्रप राजाओं की सत्ता थी । कालिकाचार्य ने उनसे मिलकर मालवापर आक्रमण करवाया एवं गंधर्वसेन को अपनी सत्ता छोड़ वनों में पलायन

करना पड़ा। गंधर्वसेन 'गदावीर' उपाधि से जाने जाते थे। कालांतर में उसका अपभ्रंश 'गदाभिल्ल' हो गया।

विंध्याचल के जंगल में ही गंधर्वसेन की महारानी राजमहिषि या 'सोम्यादर्शन' (सोम्या) एवम् नवविवाहिता साध्वी 'सरस्वती' को संताने हुई। साध्वी सरस्वती को ई.पू.१०१ में कन्या 'मैनावती' तथा ई.पू.१०४ में 'भर्तृहरि' पुत्र तथा महारानी सोम्या को इ.पू. १०१ में 'विक्रमसेन' पुत्र प्राप्ति हुई। एक दिन गंधर्वसेन जंगल में एक सिंह का शिकार हो गया। पति के विरह में साध्वी सरस्वती ने अपने प्राण त्याग दिए।

महारानी सोम्यादर्शन ने अपने पुत्र भर्तृहरि तथा पुत्री मैनावती के साथ महर्षि वासूरत के आश्रम कृष्ण भगवान की नगरी द्वारका में शरण ली। वहां भर्तृहरि व मैनावती ने गुप्तरूपसे शिक्षा ग्रहण की। भर्तृहरि तथा मैनावती धर्मशास्त्रों में अपने गुरू के आश्रम से प्रखर प्रतिभाशाली हुए। विक्रम ने जंगल में ही भिक्षु भद्रशील के आश्रम में शिक्षा ग्रहण की। उसे आचार्य विजयभट्ट ने राजनीति व युद्धनीति की शिक्षा दी। विक्रमसेन ५ वर्षे की आयु में ही जंगल में तपस्या करने गया एवं १२ वर्ष की कालावधि में सभी प्रकार की शिक्षा व सिद्धियाँ हासिल कर वापस लौटा। कन्या मैनावती का विवाह बंग प्रदेश के राजकुमार 'मालिकचंद' से किया गया। कुछ दिनों बाद उसे 'गोपीचंद' नामक पुत्र हुआ। गोपीचंद भी धार्मिक प्रवृत्ति का था अतः वह गुरु गोरखनाथ का शिष्य बन संन्यासी जीवन बिताने आश्रम चला गया। भरथरी (भर्तृहरि) एवं गोपीचंद (मामा-भांजा) के गीत राजस्थान में आज भी गूंजते हैं।

विक्रम जब युवा हुआ उसमें महान योद्धा के समग्र गुण समाहित हो चुके थे। वह धनुष्यबाण, खड्ग, असी, त्रिशुल, गदा व परशु आदि में प्रवीण था। नेतृत्व करनेकी क्षमता एवं संगठककी पुरी पात्रता उसे प्राप्त थी। उसने एक सैन्यदल का गठन किया। उसने अपने मित्रों को साथ लिया जिनमें सावीर गणराज्य का युवराज प्रद्युम्न, कुनिंद गणराज्य का युवराज भद्रबाहु, अमरगुप्त आदि थे। सेनाबल बढाने गांव-गांव के शिव मंदिरों में भैरव भक्त के नाम से युवकों को भरती करना शुरु किया। उन्हें त्रिशूल दिये गये। वनों में शास्त्राभ्यास कराया जाने लगा। बढते-बढते सैनिकों की संख्या लगभग पच्चास सहस्त्र हो गई। सात वर्ष बीत गये। आंध्र का युवराज 'अपिलक' को भैरव सेना का सेनापति बना दिया गया। धन जुटाने का कार्य 'अमरगुप्त' को सौंपा गया। प्रथम शताब्दी के महाकुंभ के अवसर पर सभी भैरव सैनिकोंको साधू-संतों के वेश में उज्जैन सभोवताल के सैकडों ग्रामों के मंदिरों में ठहराया गया। महाकुम्भ स्नान समाप्ति पश्चात भैरवसेना ने उज्जैन और विदिशा को घेर लिया, युद्ध हुआ और वहां का शासक

शकनृपति 'शोषद' भाग निकल गया। मथुरा, सौराष्ट के राज्यों से भी शक शासक भूमक एवं राज्बुल भी युद्ध में हार गये एवं सभी आक्रमणकारी शक राजाओं को कुचल डाला गया। मालवा पूर्णतया स्वतंत्र हुआ।

यो रूमदेशधिपति शकेश्वर जित्वा गृहीत्वोज्जयिनी महाहवे।
आनीय सम्भाम्य मुमोचयत्यहा स विक्रमार्कः समस ह्याचिक्रम ॥
(ज्योतिविर्दाभरण-२२-१७)

अर्थात - रोम देश के स्वामी शकराज को पराजित करके विक्रमादित्य ने बंदी बना लिया और उसे उज्जैनी नगर में घुमाकर छोड़ दिया था। विक्रमादित्य ने जब शकों को सिंध सीमापार खदेड़ा अतः उन्हे 'शकिर' की उपाधि प्रदान की गई। ई.पू.६८ में विक्रमसेन ने अपने ज्येष्ठ भ्राता भर्तृहरि (भरथरी) को उज्जैन के राजसिंहासन का स्वामी बनाया। बाद में तक्षशिला का शक राजा 'कुशुलुक' ने भी विक्रम से संधि कर ली। मथुरा के शक शासक की महारानी ने विक्रम की माता सौम्या से क्षमा मांगी तथा अपनी पुत्री 'हंसा' का विक्रम से विवाह करा दिया। महारानी 'चित्रलेखा' सिंहलद्वीप के यदुवंशी राजा की पुत्री के अतिरिक्त अन्य रानियाँ मलयावती, मदनलेखा, पद्मिनी, चेल्ल, चिल्हमादेवी चव्हान वंशी वीरा, चालुक्य वंशी नीना तथा परिहार वंशी भोगावती थी। उसी तरह विक्रम के पुत्र - विक्रमचरित, विनयपाल तथा पुत्रियाँ - प्रियंगुमंजरी (विद्योत्तमा) व वसुंधरा बतायें गये हैं।

भर्तृहरि ने राजपाट अच्छी तरह चलाया। प्रजा खुश थी। विक्रम प्रधान की भूमिका निभा रहा था। भर्तृहरि को एक दिन अपनी जान से भी प्यारी रानी पिंगला के सेना के एक अधिकारी से अनैतिक संबधों का पता चला। वह बहोत दुखीं हुआ। राजपाट त्याग कर वह बैरागी (संन्यासी) बन गया। गुरु गोरखनाथ का शिष्य बन गया। महाज्ञानी महायोगी भर्तृहरि ने त्रैशतक काव्य एवं संस्कृत व्याकरण के सिद्धांत नामक ग्रंथों की रचना की और वह चिरकाल अमर हो गया। कुछ विद्वानों के मतानुसार भर्तृहरि ने केवल १२ वर्ष (ई.पू.६९ से ई.पू. ५६) शासन किया।

इसवी पूर्व ५७ में कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी (धनत्रयोदशी) बुधवार उत्तराफाल्गुन नक्षत्र के शुभमुहूर्त मध्यकाल में जनता के आग्रह पर विक्रमसेन को 'महाराजाधिराज विक्रमादित्य' के नाम से सिंहासन पर पदारोहण किया गया। उसने सिंहासन ग्रहण करते ही मालवा राज्य को गणतंत्र में बदल दिया। लाखों की संख्या में शक लोगों को यज्ञोपवित एवं यज्ञ विधि विधान से हिंदू धर्म की दीक्षा दिलाई गई। विदेशी आक्रमणकारी शक पूर्णतया भारत भू से लुप्तप्राय हो गये। इस खुशी में ईसा से ५७ वर्ष

पूर्व विक्रमादित्य के राज्याभिषेक पर विक्रम संवत (संवत्सर) की स्थापना हुई। नई हिंदू पंचांग का अभ्युदय हुआ। विक्रमसवंत का शुभारम्भ चैत्र शुक्ल प्रथम वर्षारम्भ से हुआ। यह पंचांग भारत तथा नेपाल में अभी भी अधिकृत रूप से प्रचलन में है। जिस सिंहासन पर विक्रम आसीत् हुये वह रत्नजडीत, ३२ पुतलियों से सुशोभित था। उसे विक्रम के दादा महाराज इंद्रदेव (इंद्रसेन) ('नाबोवाहन') ने भेंट किया था। इसी सिंहासन पर जगविख्यात सिंहासन बत्तीसी कहानियाँ ११वी सदीमें बनाई गई एवं राजा भोज को विक्रमादित्य समकक्ष दर्शाया गया। अन्य रचना बेताल पच्चिसी में उसकी सर्वगुण सम्पन्न प्रखर प्रतिभा उजागर होती है। सिंहासन बत्तीसी कहानियों में विक्रमा दित्य के ३२ गुणों का वर्ण विद्वत है। ३२ अप्सराओं (पुतलियों) बखान ने किया है। वह गुण निम्नांकित है।

१. पराक्रम, २. त्याग, ३. न्याय, ४. चरित्र, ५. योगशक्ति, ६. परोपकार, ७. उत्तरदायित्व, ८. पुरुषार्थ, ९. कृत्वय, १०. विवेकशिलता, ११. मित्रता, १२.आत्मसम्मान, नारी सम्मान, १४. देवत्व, १५. साहस, १६. बलिदान, १७. धर्मपरायण, १८. रक्षक, १९. निष्काम, २०. तेजस्वी, २१.दान, २२.यश-कीर्ती, २३. प्रजाप्रेमी, २४. नीतिनिपुन, २५. उदारता, २६. आदर्श राजा, २७. भक्ति, २८. दुखभंजक, २१. प्रेम, ३० संचालक, ३१. ज्ञान, ३२. भगवान।

सर्वगुण सम्पन्न सम्राट विक्रमादित्य ने भक्ति, जप, तप, साधना से सभी शक्तियाँ, सिद्धीयाँ हासिल की थी। भगवान राम के चरित्र में ९ गुण, भगवान कृष्ण के पास १६ गुण थे, जबकि विक्रमादित्य में ३२ गुण समाहित थे। इसलिए वे सर्वशक्तिमान चक्रवर्ती सम्राट सदाचारी महापुरुष की प्रतिभा से अलंकृत थे।

विक्रमादित्य महाकाल व माँ हरसिद्धी के परम भक्त थे। कहां जाता है विक्रम ने उज्जैन के हरसिद्धी देवी को ११ बार सिर चढाया था। उन्होंने उज्जैन में महाकाल मंदिर का जीर्णोद्धार किया। प्रयागराज के घाटों का निर्माण कर सौंदर्यिकरण किया। ब्राह्मणों को दान देता रहा। हर नागरिक उसके राज्य में स्वतंत्र था तथा न्याय का हकदार था। वह हिंदू जीवन प्रणाली तथा संस्कृति का पुरस्कर्ता था। उसके साम्राज्य में लोक समृद्धशाली निर्भयी एवं सुखी थे। उसके काल में साहित्य, कला एवं संस्कृति का विकास शिखर पर पहूंच चुका था। वेताल भट्टने १६ छंदों का नीतिप्रदीप ग्रंथ की रचना की थी और उस ग्रंथके अनुसार विक्रमादित्य ने अपनी दैनंदिनी दिनचर्या अपनाई थी। वो प्रजा के लिए आदर्श था। वह केवल तीन घंटे रात्री में नींद लेता था, समयबद्ध तरीके से दिवस-रात्री के २४ घंटों को १६ प्रहर में विभाजित कर राज्यकारभार की देखरेख करता था।

विक्रमादित्य ने न केवल विशाल हिंदू राष्ट्र की स्थापना की थी उसने विद्वानों को आश्रय प्रदान किया था। उसका राज्य धर्म, नीति, कर्म का साक्षात आदर्श था। उसके राज्यसभा में नव महान विद्वानों को 'नवरत्न' से सर्वोच्च सम्मान से उपकृत कर आसन प्रदान किया गया था। वे उस काल के अपने-अपने क्षेत्र में महान पंडित थे। नवरत्नों में, १) महाकवि (मातृगुप्त) कालिदास (शंकुतलम के रचनाकार), २. ज्योतिषाचार्य (मिहिरसेन) वराहमिहिर (बृहत संहिता के रचनाकार), ३. धर्मगुरु बेताल भट्ट, ४.आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि, ५. साहित्यकार अमरसिंह (अमरकोष के रचियता) ६. शिल्पकार घटखपर/ हरिसेन, ७. दार्शनिक क्षिपनक, ८. भुगोल शास्त्री शंकु, तथा ९. भविष्य व व्याकरणशास्त्री वररुचि थे।

धवंतरि छिपनक अमर घटखपर बैताल।

वररूचि शंकू वराह मिल कालिदास नवलाल।। (दयालदासकृत हरजस)

इसी तरह बाद के राजागण अपने राजदरबार में नवरत्नोंके रूप में विद्वानोंको सम्मान प्रदान करते थे। मुगल सम्राट अकबर के राजदरबार में भी नवरत्न आसीन थे। मातृगुप्त को कालिदास इसलिए कहते थे क्योंकि वे कालि के परमभक्त थे और उन्हों ने अपनी जिव्हा काटकर रक्त चढाया था तथा देवी ने उन्हे मेधा का वरदान दिया था। विक्रम का राजपुरोहित त्रिविक्रम व वसुमित्र, मंत्री भट्टी, सेनापति - विक्रमशक्ति व चंद्र थे।

सम्राट विक्रमादित्य भास्कर पुराण में अपने सम्पूर्ण वंशवृक्ष के साथ खडा है। उनका वर्णन सूर्यमल्ल मिश्रण कृत वंश भास्कर में भी है। विक्रमादित्य ने ईसा पूर्व ५७ से ई.स. १५ तक (७२ वर्ष) शासन किया। इस दौरान करीब प्रारम्भिक पच्चीस वर्ष उन्होंने युद्ध में व्यतित कर विशाल साम्राज्य का निर्माण किया जो एशिया खंड के दूर-दराज तक पश्चिम में सिंधू नदी पार अफगानतक , उत्तर में मक्कामदिना, दक्षिण में आंध्र तथा पूर्व में जावा, सुमात्रा, बाली तक फैला हुआ था। उसने अरबस्थान के शासक को हराकर उस प्रदेश को अपने साम्राज्य में सम्मिलित करने का उल्लेख 'Barham Bin Soi' नामक अरबी काव्य में मिलता है। भारतीय इतिहास में इतना विशाल साम्राज्य और किसी का नही पाया जाता है। कहावत प्रचलित है कि विक्रम के घोडे तीन समुद्रों का पानी एक साथ पीते थे। उसने अपने साम्राज्य को १८ प्रदेशों में बाटा था।

विक्रमादित्य सभी शास्त्र, कला, तांत्रिक-मांत्रिक विद्याओं में निपुण था। वह

शौर्य, धैर्य, कला, साहित्य, धर्म, कर्म, नीति, न्याय से अलंकृत व्यक्तित्व का धनी था। वह सदाचारी था। ब्रह्ममुहुर्त से दिन भर कार्यो में व्यस्त रहता था। उसने उत्कृष्ठ हिंदू आदर्श राजा की भूमिका निभाई। उसके काल में संस्कृत साहित्य चरम सीमा पर पहुंचा था। उसके साम्राज्य में जनसमाज शिक्षित, समृद्ध एवं व्यक्ति-स्वतंत्र गणतंत्र का आनंद लेता था। उसने सुवर्ण युग भारत में प्रस्थापित कर अद्वितीय इतिहास रचा था। उसे महानतम हिंदु सम्राट माना गया है जो इंद्र, रामचंद्र, कृष्ण का समन्वय था (भविष्य पुराण)। उस काल में संस्कृत, प्राकृत व जनजातियों की बोलिया प्रचलित थी।

एक संस्कृत रचना अनुसार विक्रमादित्य ने अयोध्या के रामजन्मभूमि मंदिर का जीर्णोद्धार किया था। कर्नाटकी यक्षगान काव्य में विक्रमादित्य द्वारा शनिदेवता का विक्रमादित्य से हार का रोचक वर्णन है। उसी तरह सिंहासन बत्तीसी एवम् बेताल पच्चीसी जैसी लोकप्रिय कथायें विक्रमादित्य की महानता, गुणवत्ता, शील, ई. उजागर करती है। ब्रिटिशकालीन शिलालेख वर्तमान मक्काकाबा मसजिद को विक्रमादित्य द्वारा निर्मित शिवमंदिर बताया गया है। उसका एक जगविख्यात अरबी साहित्यकार 'सेरुअल ओकुल' की रचना 'जिरहम' भी समर्थन करती है।

विक्रमादित्य ने अपने पुत्र 'विक्रम चरित' को ई.स. १५ में राजगादी सौपकर वानप्रस्थ जीवन बिताने वन चले गये। विक्रमादित्य के मृत्यु के पश्चात शकों के आक्रमण फिरसे शुरू हुये तब उनके प्रपौत्र शालिवाहन ने शकों को पराजित किया और तब ई.८७ से शालिवाहन संवत प्रारम्भ हुआ। हमारी केंद्र सरकार ने इसे राष्ट्रीय संवत की मान्यता दी है। विक्रमादित्य की कुल उम्र ९० से १०८,१३१ बताई गयी है। विक्रमादित्य जन्म : १०१ बी.सी. विक्रमादित्य शिक्षा समाप्ति ९७-८५ बी.सी. विक्रम सेना से शकों का पतन - ७८ बी.सी., भर्तुहरि का शासन - ६८-५६ बी.सी., विक्रमादित्य का शासन - ५६ बी.सी. - १५ ए. डी. विद्वानों ने सुनिश्चित किया है। कहीं कहीं विक्रम का शासन काल १३५ - १४४ वर्षोंतक का कहां गया है जो तर्कसंगत नही लगता।

***

चक्रवर्ती राजा भोज

मालव चक्रवर्ती सम्राट भोज मध्ययुगीन भारत के इतिहास में सम्राट अशोक तथा विक्रमादित्य के समान महाप्रतापी, शूरवीर, कुशल शासक, विद्वान, कवि, दानी, ज्ञानी, न्यायी, धार्मिक, सदाचारी, विद्वानों का आश्रयदाता, ज्ञान-विज्ञान, कला, साहित्य, संस्कृति का पुरस्कर्ता, एवम् लोक सुख-समृद्धि हेतु सदैव कार्यरत, सुरक्षा दक्ष तथा प्रजा में अगाध लोकप्रिय अद्वितीय आदर्श चक्रवर्ती राजा हुआ।
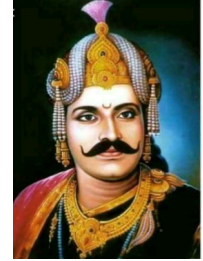
भोज इतना महान व्यक्तित्व का बलाढ्य धनी था कि उसे अनेक उपाधियों से अलंकृत किया गया था जैसे - महाधिराज परमेश्वर, परम भट्टारक महाधिराज परमेश्वर, मालवमण्डन, सार्वभौम, मालवचक्रवर्ती, अवन्तिनायक, धारेश्वर, निर्वाणनारायण, त्रिभुवननारायण, लोकनारायण, विदर्भराज, अहिराज, अहिंद्र, अभिनवार्जुन, कृष्ण, रणरंगमल्ल, आदित्यप्रताप, चाणक्यमाणिक्य, कविराज आदि करीबन ८४ उपाधियाँ डॉ. श्री. वी. वेंकटाचलम् ने धार स्टेट गजेटियर पृ.१०७ पर उल्लेखित की हैं। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री स्व.श्री.पं.जवाहरलाल नेहरु ने भी अपनी जग-विख्यात रचना 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' में धाराधिश राजा भोज को मध्ययुगीन भारत का महान राजा निरुपित किया है।

भोज को भोज, भोजदेव, भोजराज, भोजपति, नरेंद्र, आदि नामों से संबोंधित किया गया है। पं.राजवल्लभ कृत 'भोजचरित' में भोज का जन्म माघ शुल्क ५ (बसंत पंचमी) को संवत् १०३७ (ई.९८०) में अंकित है। वह पिता मालवाधिश सिंधुलराजदेव तथा माता महारानी सावित्री देवी का ज्येष्ठ पुत्र था तथा वाक्पति मुंजदेव का भतिजा था। भोज की विमाता रत्नावली, शशिप्रभा आदि थी। भोज के लघु भ्राता का नाम दुशल या उत्पलदेव था जो किराड राज्य का स्वतंत्र राजा बना। भोज की पत्नी महारानी लीलावती तथा अन्य पत्नियाँ सत्यवती, मदनमंजरी, भानुमती, पिंगला,सुभद्रा आदि थी। भोज के तीन पुत्र थे जयसिंह, देवराज तथा वत्सराज तथा दो पुत्रियाँ - राजमति एवं भानुमति थी। भोज की पत्नी, महारानी लीलावती महान कवियत्री तथा गणितज्ञ थी एवं राजदरबार में महाकवी कालीदास को कई बार शास्त्रार्थ वाद-विवाद में हरा चुकी थी।

भोज सभी प्रकार के शस्त्र तथा शास्त्रों में निपुन था। उसने राजा मुंजदेव (ताऊ) तथा राजा सिंधुलराजदेव (पिता) के काल में शुरवीर सेनानी तथा विद्वान कवि के रुप में ख्याति पाई थी। किसी समय महाराजा मुंज के दरबार में एक ज्योतिषी आया तथा उसने भोज की जन्म कुंडली देखकर बतलाया कि हे राजन, सुनोः-

पंच्चाशत्पंचवर्षाणि सप्त मास दिनत्रयम् ।
भोजराजेन भोक्तव्या सगौडो दक्षिणपथः।।

अर्थात् ५५ वर्ष, ७ माह ३ दिन गौड़ बंगाल सहित दक्षिण दिशा का राज्य भोजराज भोगेगा।

मुंज के मृत्यू पश्चात राजा सिंधुलराज मालवा नृपति बने । राजा सिंधुलराजदेव ने अपनी वृद्धावस्था के कारण अपना राजसिंहासन अपने मेधावी ज्येष्ठ पुत्र भोजदेव को सौपकर स्वयं तपस्या करने वन में चला गया । इस वक्त भोज केवल २० वर्ष आयु का किशोर था । इतिहासकारों के अनुसार भोज मालवा राजसिंहासन पर मार्गशीर्ष वदी १०, संवत १०५६ (१०००ई.) दिन आरुढ़ हुआ ।

प्रारम्भ में भोज को अपने परिजन दुश्मनों से संघर्ष करना पड़ा । मुंजदेव के दोनो पुत्र आबु तथा जालौर के स्वतंत्र राजा होने के पश्चात भोज ने चेदीश्वर, इन्द्ररथ, भीम,तोग्गल, चालुक्य, कर्णाट, लाट, तुरुक, गांगेयदेव आदि अनेक राजाओं को युद्ध में हराकर मालवा राज्य की सीमाएं चारो दिशाओं में विस्तृत की । अपनी राजधानी उज्जैन से धारा नगरी स्थलांतर की ।

भोज का विजय अभियान : राजा भोज सिंहासनारूढ होते ही कल्याणी के चालुक्यों से प्रतिशोध लेने के लिये सज्ञ हो गये । राजा भोज ने कल्याणी पर आक्रमण किया, इस युद्ध में कलचुरी शासक गांगैय देव और दक्षिण के चोल राजा राजेन्द्र ने भोज का साथ दिया । कल्याणी के चालुक्य पर विजय, भोज की पहली विजय और पहला सैनिक अभियान था।

कोंकण और लाट प्रदेश पर चालुक्यों के ही सामन्तों का आधिपत्य था । इसलिये भोज का द्वितीय सैनिक अभियान कोंकण और लाट प्रदेश के लिये हुआ । यहाँ भी राजा भोज को विजयश्री मिली । लाट प्रदेश में राजा भोज ने अपने सामन्त यशोवर्मा को पदस्थ कर दिया । राजा भोज ने आदिनगर (उड़ीसा) के सोमवंशी राजा इन्द्ररथ को पराजित कर उसे अपना अधीनस्थ बना लिया ।

राजनीति के रिश्ते स्थायी नहीं होते । मित्रता एवं शत्रुता व्यक्तिगत लाभ-हानि एवं स्वार्थ से बदलती रहती है । दक्षिण की विजय यात्रा में कलचुरि शासक गांगेयदेव ने भोज का साथ दिया था किन्तु भोज ने कलचुरि शासक गांगेय देव के चेदि प्रदेश पर भी आक्रमण कर दिया । ऐसा लगता है कि भोज गांगेय देव की बढ़ती हुई शक्ति से सशंकित था । गांगेय देव ने प्रतिहारों के पतन से लाभ उठाते हुये उनके बनारस के क्षेत्र पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था । अब वह प्रतिहारों के प्रमुख केन्द्र कन्नौज के क्षेत्रों पर अपना आधिपत्य स्थापित करने की योजना बना रहा था । राजा भोज की भी

दृष्टि प्रतिहारों के उसी क्षेत्र पर लगी हुई थी । इसलिये प्रारम्भ में ही भोज ने कलचुरी नरेश पर आक्रमण कर उसकी शक्ति क्षीण कर दी जिससे वह कन्नौज की ओर न जा सके । विजयश्री ने भोज का साथ दिया। इस लडाई के बाद कहां राजा भोज और कहां गांगेय तैलप यह कहावत मशहूर हुई ।

कन्नौज से संलग्न क्षेत्रों पर आधिपत्य स्थापित करने के लिए भोज अत्याधिक लालायित था । रास्ते में जेजाकभुक्ति के सशक्त विद्याधर चन्देल का राज्य था । ग्वालियर के कछवाहे विद्याधर के करढ़ सामन्त थे। भोज विद्याधर चन्देल से नहीं टकराना चाहता था क्योंकि उसकी शक्ति से वह परिचित था । इसलिये भोज ने ग्वालियर और दूबकुंड को अपना शिकार बनाना चाहा, क्योंकि इस राह से भी कन्नौज पहुंचा जा सकता था । ग्वालियर पर आक्रमण हो गया । भोज पराजित हो गये । यह उनके जीवन की पहली असफलता थी । संभव है विद्याधर ने अपने सामन्तों की सहायता की हो जो उसका धर्म था । विद्याधर के एक अभिलेख में भोज का श्रीहीन होना अंकित है, जिससे लगता है कि विद्याधर ने अपने सामन्तों की सहायता की थी। इसी बिच विद्याधर का निधन हो गया। जेजाकभुक्ति की चन्देल सत्ता चरमराने लगी। चन्देल सत्ता के पराभव के साथ ही ग्वालियर के कछवाहा सामन्त ने चन्देल सत्ता की सामन्ती छोड़कर भोज की सामन्ती ग्रहण कर ली। भोज के लिये कन्नौज की राह साफ हो गई । उचित अवसर देखकर भोज ने कन्नौज पर आक्रमण कर दिया और वह कान्यकुब्ज के कुछ क्षेत्रों पर अपना आधिपत्य स्थापित करने में सफल भी हो गया। इसी के साथ उत्तरप्रदेश के कुछ अन्य क्षेत्रों पर भी भोज ने अपनी सत्ता स्थापित कर ली।

भोज का अन्तिम सैन्य अभियान अनहिलवाड़ा के चालुक्य भीम के विरूद्ध हुआ । यद्यपि भीम और भोज में मित्रता थी, किन्तु भोज ने मित्रता की अनदेखी करते हुये अनहिलवाड़ा पर उस समय आक्रमण किया जब भीम किसी सैन्य अभियान में अपनी राजधानी से बाहर था। इस सैन्य अभियान का नेतृत्व भोज ने नहीं किया था, वरन् उनके सेनापति कुलचंद्र ने किया था। भीम की अनुपस्थिति में उसकी राजधानी असुरक्षित हो गई थी और बड़ी सरलता से मालवा की सेना ने उसे खूब लूटा और ध्वस्त किया और कुलचंद्र की लूट यह किवदन्ति बन गई । भीम ने सक्षम होते हुये भी प्रतिशोध में भोज के विरूद्ध अप्रिय कार्य नहीं किया।

अंततया, भोज का विक्रम संवत १०७८ (१०२१ ई.) में मात्र २०वर्षो बाद, ४०-४१ वर्ष की आयु में ''मालवसम्राट परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर त्रिभुवन चक्रवर्ती'' के सर्वोच्च सर्वभौम पद पर राजतिलक हुआ (शुभशील - भोजप्रबंध). भोज ने अपने सेनापति कुलचंद्र तथा सुरादित्य के साथ अपने राज्य की सीमा उत्तर में हिमालय (कश्मिर) दक्षिण में मलय (केरल), पश्चिम में द्वारका तथा पूर्व में बंगाल तक

विस्तारित की थी (अवंतिका शिलालेख). पी.टी. श्रीनिवास अयंगार, भोज का राज्य गोदावरी तथा यमुना तक तथा डी.सी. गांगुली, भोज का राज्य उत्तर में बांसवाडा, डुंगुरपुर तक, दक्षिण में गोदावरी तक तथा पश्चिम में कैरा जिलेतक विस्तुत मानते हैं। डॉ. दशरथ शर्मा अनुसार गुजरात का अहमदाबाद तक का भाग, मालवा, बहुतांश राजस्थान, मध्यभारत का अधिकांश भाग, बस्तर भाग तथा महाराष्ट्र के कोंकण, खानदेश और विदर्भ उसके साम्राज्य में सम्मिलित था। अतः भोज सार्वभौम राजा था। मालवचक्रवर्ती बन चुका था। उसने अनेक छोटे-बड़े राजाओंको पराजित कर अपने राज्यक्षेत्र की सीमाओं में वृद्धि की थी। परिणाम स्वरुप भोज ने अपने पैतृक राज्य के रुप में केवल मालवा प्राप्त किया था जिसे उसने विशाल साम्राज्य में परिवर्तित कर दिया। वह ८४ सामंतों (मांडलिक राजाओं) का स्वामी था। उसने ८४ उपाधियाँ ग्रहण की थी। ८४ ग्रंथ लिखे। धार में ८४ प्रासाद, देवालय तथा चौराहे बनाए थे (श्रृंगारमंजरी कथा)।

भोज बनाम गजनबी - इतिहासकारों के अनुसार राजा भोज भारत का पहला हिन्दु राजा था जिसने विदेशी मुस्लिम आक्रमणकारियों को इस देश में पांव जमाने नही दिये। अफगानिस्तान के गजनबी ने जब-जब आक्रमण किया, भोज ने उसे देश की सीमाओं के बाहंर खदेड़ा।

सर्वप्रथम भोज ने वर्ष १००८ ई. में. लाहौर के नृपति शाही आनंदपाल को सुल्तान महमूद गजनवी के आक्रमण का मुकाबला करने अपनी सेना भेजी। इसी तरह उसके पुत्र त्रिलोकपाल जो वर्ष १०१९-२० ई. में लाहौर का शासक था उसे भी अपनी सेना भेजी एवम् भोज ने गजनवी के आक्रमणों को नाकामयाब किया (धार गजेटियर).

गर्दीजी कृत ''जैनुल अखबार'' के विवरण अनुसार वर्ष १०२४-१०२६ ई. में महमूद गजनवी ने भारत पर दोबारा आक्रमण किया। वह जैलसमेर, मारवाड, गुजरात मार्ग से आगे बढ़ा। गुजरात के चालुक्य नरेश भीम प्रथम की सेना गजनवी के सैन्यबल के सामने टिक न सकी और उसने सोमनाथ मंदिर की तोड़फोड़ कर खुब लूट-पाट मचायी। किन्तु राजा भोज की विशाल सेना की खबर सुनते ही वह सिंध के रास्ते रेगिस्थान होते हुए वापस अफगानिस्थान लौट गया। उसे वापसी में अपनी सेना एवम् पशुओं की भारी प्राणहानि झेलनी पड़ी। राजा भोज ने सोमनाथ मंदिर की मरम्मत करवाई।

लूअर्ड तथा लेले कृत - ''दी परमाराज ऑफ धार एन्ड मांडू'' में जानकारी दृष्टिगत होती हैं कि राजा भोज ने मूहमद गजनवी के आक्रमणों का मुकाबला करने के उद्देश्य से हिंदू राजाओं का एक सशक्त संघ बनाया था जिस में कलचुरी नरेश लक्ष्मीकर्मा तथा चौहान आदि राजपूत वंशी नृपतिगन सम्मिलित थे। ''फरिश्ता'' में इस

संघ की संयुक्त सेना में अजमेर, कनौज, कालिंजर, लाहौर आदि राज्यों की सेनाओं के सम्मिलित होने की पूष्टि की है ताकि लाहौर नरेश जयपाल आक्रमणकारी गजनबी को लोहा दे सके।

ए. इं. खंड ३, पृष्ठ ४६ पर उल्लेख मिलता है कि जब महमूद गजनबी के पुत्र मलिक सलाल मसूद ने सन १०४३ ई. में लाहौर पर आक्रमण किया तब राजा भोज के नेतृत्व में हिंदू राजाओं की संयुक्त सेना ने बहराइच के मैदानपर एक माह तक घनघोर युद्ध किया और उसे वापस भगाया। तद्पश्चात संयुक्त सेना ने हांसी, थानेश्वर, नागरकोट आदि के किलों को मुसलमानों से आजाद किया। गजनबी के सेनापति तोग्गल से लाहौर का किला मुक्त कराने के लिये भोज ने लगातार सात माह तक युद्ध कर अंत में जीत हासिल की।

भोज का महान व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व : श्रृंगारमंजरीकथा में भोज ने अपने व्यक्तित्व का परिचय दिया है - भोज सुवर्णमय कांतीवाला, उँचा, भीमभूजाधारी, अतिसुंदर चेहरा, उँचा माथा, विशाल वक्षवाला महापराक्रमी आकर्षक व्यक्तित्व का धनी था -

कनककांतिच्छुरितमरकतप्रभाभिरामदेह : । निजभुजोघालितदुर्मदरिपु ।
सतताविप्कृत सुदर्शनोपि दुर्दशनः लावण्यपीयुसलिलाः ।
हराट्टहास इव विशादकांतिसम्पदः अभूत प्रसवभूमि ।

अर्थात - मरकत की सुवर्णप्रभा मिश्रित गेहुँए वर्ण का शरीर, अपरिमित शक्तिवाली भुजाएँ जो दुष्मनोंको भयभीत करें, तथा उसकी आकर्षक शरीर आकृति पर हरदम विलासीनियॉ मुग्ध रहती थी। भोज ऋतु अनुरुप विविध पुष्पों का लेपन करता था।

उसकी धर्म में अटुट श्रद्धा थी। वह महिला एवं बच्चोंपर कभी भी शस्त्र नही चलाता था। शरणागती आये हुए दुश्मनोंको आश्रय प्रदान करता था। वह परस्त्रियों का सम्मान करता था तथा कामिनियों से सदा दूर रहता था। वह शिव, जगनारायण, सरस्वती तथा काली माँ का उपासक था।

वह धनुर्विद्या, असिधेनु (लम्बा चाकू या छुरी) कृपाण तथा तलवार चलाने में निपुन था। उसने 'खड्गशतम्' लिखा था। भोज उन्मत्त हाथी को वस में करने की विद्या जानता था। वह हस्तिलक्षणों, अश्वगुणों तथा उनकी चिकित्सा का ज्ञाता था (युक्तिकल्पतरु, शालिहोत्र, कोदण्ड काव्य)। भोजदेवकृत युक्तिकल्पतरू ग्रंथ अनुसार उसके तीन प्रकार के सेनादल थे, पैदल सेना, अश्वसेना तथा हस्ती सेना।

यश्च प्रभवो धर्मस्य, आश्रयः सत्यस्य, कुलगृहं कलानाम्
क्षेतं क्षत्राचारस्य, प्रमोदोद्यानं, विद्यालतानाम्,निधानं
नीतेः, जीवितं शौर्यस्य,वसतिर्विलासानाम्,

आकरः करुणायाः, बान्धवो वैदग्ध्यस्य.......रसस्य, धौरेयो
धनुर्धराणाम, अग्रणी गुणवताम् । श्रृ.मं.क.पृ.९

स्वयं भोज में धर्म, सत्य, कला, क्षत्राचार, विविध विद्या, नीति, शौर्य, विलास, करुणा, विद्ग्धता, रसिकता, धनुर्धरता, इ. विविध गुणोंका समाहार था । भोज उदार, शालीन एवं परिष्कृत मनोवृत्तिका आदर्श नरेश था । भारतीय आदर्शो का वह प्रतीक था । उसने इन्ही गुणोंसे लोकमानस में विपुल रुप से प्रतिष्ठा पाई ।

भोज सम्राट अशोक जैसा सदाचारी तथा सम्राट समुद्रगुप्त जैसा साहित्यिक एवम् सम्राट विक्रमादित्य जैसा शूरवीर एवम् न्यायी राजा था जो सदा अपनी प्रजा के सुरव-समृद्धि के लिए समर्पित था । इस प्रकार भोज में विविध गुणों का समाहार था । वह गुणवानों में अग्रणी था। राजा भोज के शासन काल में मालवा अति श्री संपन्न था । वह कविराज 'मालवा चक्रवर्तिन्' कहलाता था तथा इन्हें हम हिंदू भारत के महानतम् नरेशों के पंक्तियों में रख सकते हैं। मालवमणि भोज के स्वर्गवास पर श्री. बल्लाल पंडित ने लिरवा है :-

अद्य धारा निराधारा, निरालम्बा सरस्वती,
पंडिताः खंडिताः सर्वे, भोजराजे दिवंगते।

एक किंवदंति के अनुसार कवि कालीदास (भोज के दरबार का महाकवि पं.छित्रप) नाराज होकर धार से कहीं चले गये तथा जब उनका पता न चला तब भोज ने अपने को मृतक घोषित कर दिया जिससे कालीदास वापिस आ जावे। इस मृत्यु का समाचार सुनते ही कालीदास ने उक्त श्लोक कहा था तथा जब धार में आये तब उनने पाया कि राजा भोज जीवित हैं तथा उन्होंने भोज की प्रशंसा करते हुए यह श्लोक कहा किः-

अद्य धारा, सदा धारा, सदा लम्बा सरस्वती ।
पंडिताः मंडिताः सर्वे, भोजराजे भुवंगते।।

भोज सारे राज्यशास्त्र, ३६ आयुधविज्ञान, ७२ कलाओं में पारंगत था (प्रबंध चिंतामणी, रासमाला)। भोज की विभिन्न कला तथा वैज्ञानिक ज्ञान का पांडित्य युक्तिकल्पतरु, समरांगणसूत्रधार, सरस्वती कंठाभरण, श्रृंगारप्रकाश तथा श्रृंगारमंजरीकथा से विशद होता है। वह शृंगाररस में पारंगत था । उस के ग्रंथ विविध क्षेत्रों में जैसे, ज्योतिष्य, अलंकार, दर्शन, राजनीति, धर्मशास्त्र, शिल्प, व्याकरण, वैद्यक, कोष, काव्य, सुभाषित पर पाये जाते हैं । प्रभावकचरित अनुसार भोजकृत शास्त्रों में - भोज के प्रमुरव जगप्रसिद्ध ग्रंथ- १. पंतजलियोग योगशास्त्रम् वृत्ति (योगसूत्र टीका), २. भोजराजीय शाब्दानुशासन (राज्यशासन शब्दकोष), ३.राजमृगांक

(वैद्यकशास्त्र), ४.ज्योतिष राजमृगांक (ज्योतिष शास्त्र) ५.भुजबलिनिबंध मनुभाष्य (धर्मशास्त्र), ६.सरस्वती कंठाभरण (संस्कृत व्याकरण, अलंकार, भाषाशास्त्र महाकाव्य) ७.तत्त्वप्रकाश (शैव सिद्धांत), ८.श्रृंगार प्रकास (श्रृंगार रस टीका) ९.समरांगणसुत्रधार (वास्तुकला, विज्ञान, अभियांत्रिकी, शिल्पकला), १०.युक्तिकल्पतरू (राजनीतिशास्त्र) ११.श्रृंगार मंजरी (कथा संग्रह), १२.प्रबंध चिंतामणी (इतिहास), १३.चम्पु रामायण (रामायण टीका), १४.वाग्देवी स्तुति (सरस्वती गायन), १५. कूर्मशतक-काव्य १०० श्लोकीय १६.गीत प्रकाश (संगीतशास्त्र), १७.न्यायवार्तिक (न्यायशास्त्र), १८.राजमार्तण्ड (वेदांत, दर्शनशास्त्र) १९. कामधेनु धर्मप्रदीप (धर्मशास्त्र), २०.रत्नमाला (सुभाषित), इत्यादी।

भोज करीबन १४०० विद्वानों का आश्रयदाता था । कोदण्डकाव्य तथा अज्ञातनामा काव्य में भोज की विद्वत परिषद की जानकारी है जिस में विविध विषयों के ५०० विद्वान थे । विभिन्न प्रश्न / समस्याओंपर अभिमत, न्यायसंगत, तर्कसंगत निष्कर्ष पाने हेतु इन विद्वानों का मत लिया जाता था। कोई भी नागरिक निर्भिक होकर न्याय का हकदार था । भोज स्वयं भेष बदलकर राज्य में घुमता था। वर्षभर गोष्ठियाँ, परिसंवाद, संगीत, नाटक राज्याश्रय से चलते थे।

भोज ने धार में ''भोजशाला'' या ''सरस्वती सदन'' नामक विश्वविद्यालय तथा उज्जैन और मांडु में विद्यालय खोले थे । यहांपर देश-विदेश के छात्र शिक्षा ग्रहण करते थे । भोज का प्रधानमंत्री रोहक तथा मंत्री- बुद्धिसागर दोनों विद्वान थे । उसका राजपुरोहित - चंद्रशेखर दीक्षित था । भोज के राजदरबार में महाकवि चक्रवर्तीन पंडित छित्तप इतना विद्वान था कि उसे 'कालिदास' उपाधि से अलंकृत किया गया था । भोज के अन्य राजकवियों में नयनंदि, दशवल आदि थे । संक्षिप्त में भोज ब्रह्मक्षत्रि राजा था जो वीर एवं पंडित भी था । भोज के दरबार में कालिदास, वररूचि, सुबंधु, बाणा, अमर, रामदेव, हरिवंश, शंकर, कलिंग, कर्पुर, विनायक, मदन, विधाविनोद, कोकिल, तारेंद्र, राजशेखर, नाथ, धनपाल, सीना, पंडित मयुर, कवि माघ, मानतुंग आदि विद्वान थे (प्रबंध चिंतामणी, भोज प्रबन्ध)।

भोज ने रामेश्वर, सोमनाथ, केदारनाथ, महाकालेश्वर, रूद्र के मंदीरों का जीर्णोद्वार किया था। उसने काश्मीर का पाप सूदन कपटेश्वर कुंड व भोपाल की भोजपुरी झील व भोजपुर का शिव मंदीर भी बनाया था।

धार की लाट-मसजिद भोज के राजदरबार का परिवर्तित निर्माण है। इसे दिलावर खां गोरी ने १४०५ ई. में तोड़कर बनवाया था। नजदीक तीन तुकड़ो में लाट पडी है जो भोज का विजय स्तम्भ चालुक्यों व त्रिपुरी के चेदि पर विजय की स्मृति थी।

भोज का वायुयान शास्त्र : राजा भोज ने अपनी जगविरव्यात रचना ''समरांगण सूत्र''

में अनेक विज्ञानशास्त्रों का सटीक संकलन किया है। इस ग्रंथ में 'वायुयानशास्त्र' नामक ३१ क्रमांक का अध्याय है। इस अध्याय का मुल आधार महर्षि भारद्वाज कृत ''बृहद वायुयान विज्ञान'' ग्रंथ है। राजा भोज ने इस अध्याय की रचना हेतु तत्कालीन ९७ संदर्भ ग्रंथों की सूची दी है। उन्होंने ऋग्वेद, रामायण, महाभारत आदि में वर्णित (क्रमशः) आकाशगामी रथ, पुष्पक, शाल्व नामक विमानों का विवरण भी दिया है। राजा भोज ने ''पांच-मिश्र लौह'' धातु का वायुयान निर्माण के लिये उपयोग बताया है ताकि आसमान में वायुयान को लेसर किरणे क्षति न पहुंचा सके। इसी तरह इंधन के रूप में पारा (मरकूरी) इस्तेमाल करने का जिक्र किया गया है। भोज प्रबन्ध में एक श्लोक है - कि वायुयान की विशेषता यह थी कि -

घटयेकयाक्रोशदशैकमरवः सुकृत्रियो गच्छति।
वायुददाति व्यजनं सुपुष्कलं दिना मनुष्येण चलायजस्त्रय॥

अर्थात - एक घड़ी में ११ कोस भूमि व अन्तरिक्ष में चलता था। पंखा बिना मनुष्य के चलाये निरंतर चलता था।

राजा भोज द्वारा दी गई वायुयान शास्त्र की जानकारी के आधारपर मुम्बई निवासी कै. शिवशंकर बापूजी तळपदे ने वर्ष १८९५ में एक वायुयान का निर्माण किया और उसे ''मरूत्सरवा'' नाम दिया। इस वायुयान (हवाई जहाज) को स्वयम् वैमानिक बनकर करीब १५०० फीट ऊँचाई तक उड़ाया। तत्कालिन मुम्बईवासीयों ने उनकी इस असाधारण उपलब्धि की सराहना की और बड़ोदा नरेश ने उन्हे पुरस्कृत कर सम्मानित किया था ऐसा विवरण बड़ोदा राजघराने के तत्कालिन रेकॉर्ड में मिलता है। किन्तु ब्रिटिश शासनकर्ताओं ने कै. शिवशंकर तळपदे के इस अलौकिक उपलब्धि की अनदेरवी की एवम् मात्र ८ वर्षो बाद इ.स. १९०३ मं पहला वायुयान उड़ाने का सेहरा राईट बन्धुओं के सिर मढ़ दिया।

भोज की मृत्यू - गांगेयदेव के पुत्र कर्णदेव ने चालुक्य राजा भीम के साथ मिलकर ई.स. १०५५ में मालवा पर आक्रमण किया। धारानगरी शत्रुओं ने लुट ली। भोज वृद्ध हो चुका था और घातक बिमारी से रुग्ण था। इस दौरान में उसकी मृत्यु आषाढ़ वदी १३, संवत ११११२ (१०५५ ई.) को हुई। मालवा उजड़ गया। इस तरह महान सम्राट भोज का जीवनकाल आयुकी ७५-७६ वर्ष में समाप्त हुआ। भोज केराजकवि दशवल कृत ''चिंतामणी सार्णिका'' अनुसार भोज ने मालवापर १००० से १०५५ ई.तक लगातार ५५ वर्ष, ७ मास, ३ दिन तक गौरव-गरिमा के साथ राज्य किया। कुछ इतिहासकार भोज का राज्यकाल १०१० से १०५० ई. मानते है। अतः पंवार वंश की पताका लहराकर राजा भोज देदीप्यमान आदर्श हिंदु राजा के रुप में भारतीय इतिहास में अजरामर हुआ।

***

महायोद्धा जगदेव पवार

जगद्वेव / जगदेव, पंवार जाति में परमार वंश का सुप्रसिद्ध राजा होकर गया। जैनाड (आदिलाबाद, तेलंगाना) से प्राप्त अभिलेख अनुसार -

यस्योदयादित्य नृपः पितासीद्वेवःपितृव्यःस च भोजराजः।
विरेजतुर्यो वसुंधाधिपत्य प्राप्तप्रतिष्ठाविव पुष्पवन्तो ॥६॥

अर्थात - जिसका (जगदेव का) पिता नरेश उदयादित्य था और भोजराज पितातुल्य चाचा था, जिन्होंने वसुंधरा स्वामी बन (परमार वंश को) प्रतिष्ठा दिलाई।

उदयादित्य ने मालवा राज्य पर धारा नगरी से वर्ष १०७० से १०९४ ई. तक गौरवमय शासन किया। उसके तीन पुत्र थे - प्रथम लक्ष्मदेव, द्वितीय-नरवर्मन तथा तृतीय-जगदेव। पिता उदयादित्य के राज्यकाल में ही लक्ष्मदेव मालवा के दरव्रवन की उपराजधानी नगरधन (रामटेक, नागपुर समीप) से इस प्रदेश का सुबेदार था। उसकी मृत्यु वर्ष १०८६ ई. में हुई। उदयादित्य की मृत्युपश्चात धार राजसिंहासन पर नरवर्मन का राजतिलक हुआ और उसने मालवा पर वर्ष १०९४ से ११३३ तक राज्य किया।

जगदेव अपनी वीरता के लिए युवावस्था में ही उभरकर सामने आया। उसकी १२ वर्ष की आयु में टोंकटोडा के राजा राजसिंह की कन्या वीरमति से शादि हुई एवम् उसे १५ वर्ष की आयु में उसकी वीरता एवं उच्चगुण सम्पन्न व्यक्तित्व परखकर 'युवराज' घोषित किया गया। किंतु जगदेव ने अपनी विमाता द्वारा लगातार दूरव्यवहार तथा अपमान से तंग आकर धार से निकलकर पाटन (गुजरात) प्रस्थान किया।

जगदेव एवं वीरमति पाटन शहर के बाहरी तालाब किनारे उतरे। वीरमति तथा घोड़ो को वहीं छोड जगदेव योग्य विश्रामस्थल की खोज में शहर गया। एक वेश्या की नजर वीरमति पर गिरी उसने उसे फुसलाकर घर लेजाकर कमरें में बिठा दिया और कुछ ही समय बाद एक ऐय्यासी युवक को उस कमरे में भेज बाहर से दरवाजे को बंद कर दिया। वीरमति ने अपनी रवंजर से उसके तुकडे-तुकडे कर दिए। जब यह बात पाटन नरेश सिद्धराज को पता चली, वह तुरंत घटना स्थल पहुंचा, दरवाजा खटखटाया तथा वीरमति से कहा कि राजा स्वयम् तेरी सुरक्षा के लिए आया है, किवाड़ खोल, तब वीरमति ने सिद्धराज से अपना परिचय देते हुए कहा - ''बापजी, पीहर तो नगर टोडे छै।

राजा राजरी धीव छूं, बीज कुँवररी बहिन छुँ सासरो धार नगररो धनी, जाति पंवार, राजा उदयादित रै लोहड़ा बेतारी अंतेउर छूं और पाछळी सगळी बात कही।''

अर्थात् - ''पिताजी नगर टोड़े में मेरा मायका है, राजा राज की पुत्री हूँ। कुँवर बीज की बहिन हूँ। मेरा ससुराल धार नगरी के स्वामी के यहां है। जाति पंवार, राजा उदयादित्य के छोटे पुत्र की स्त्री हूँ।'' कुछ ही समय में जगदेव भी वहां पहुंचा। सिद्धराज ने दोनों को ससम्मान अपने साथ राजमहल ले गया।

पाटन के राजा सिद्धराज जयसिंह ने उसका स्वागत कर उसे सेनापति पद प्रदान किया। इस पद पर उसने १८ वर्षोंतक स्वामीभक्ति व पूर्णनिष्ठा से अपनी सेवायें प्रदान की। उसे सिद्धराज अपने तीसरे पुत्र समान प्यार करता था।

लोककथायें जगदेव का गुणगान करते नही थकती। इन कथाओं में उसे १२ हाथियों के बराबरी का शक्तिशाली बताया गया है। उसमें आमने-सामने हाथी एवम् शेर से युद्ध कर उन्हे मार गिराने की अद्भूत क्षमता थी। उसकी पत्नी भी वीरांगणा थी। जगदेव ने अपनी वीरता के बल पर सिद्धराज का राज्य चारो दिशाओं में दूर-दूर तक विस्तारित किया था। आचार्य मेरूतुंग सुरि ने प्रबन्ध चिंतामणी में जगदेव पर एक स्वतंत्र अध्याय लिखा है। वह आँख झपकते ही छुरी से ४०-५० दुश्मन सैनिकों को मौत के घाट उतार देता था। उसका नाम सुनते ही दुश्मन सेना युद्धभूमि छोड़ भाग जाया करती थी।

रासमाला ग्रंथ में जगदेव द्वारा सिद्धराज जयसिंह की आयु बढाने के लिए देवी चामुंडा को अपना सिर अपने हाथों से काटकर अर्पण करने की कथा दी गई है। उसने अपने साथ पत्नी तथा अपने दो पुत्रों के सिर चामुण्डा को अर्पण कर ४८ वर्ष की आयु सिद्धराज की बढाई। देवी ने जगदेव की स्वामीभक्ति से प्रसन्न होकर उन्हे सभी को पुनर्जिवित किया। सिद्धराज ने प्रसन्न होकर अपनी कन्या 'कमोला' से जगदेव का विवाह कर दिया एवं अपने सिंहासन के साथ उसे सिंहासन प्रदान किया। उसे २००० गांव की जागीर दी। दो हजार घोडे दिये, हाथियों का झुंड, एक हजार एक सौ पालकियां, दो सौ रथ और प्रति दिन एक लाख स्वर्णमुद्राओं से अनुबंध किया।

भूज के राजा जाडेजा की कन्या 'फूलमादी (फूलमति)' द्वारा जगदेव को वरमाला पहनाकर विवाह की कथा भी रासमाला में पाई जाती है। फूलमति सिद्धराज की राणी जाडेची की छोटी बहन थी। जाडेची को उसके सौंदर्य से मोहित होकर कालभैरव हर रात सताता था। जगदेव ने जब यह जाना तो कालभैरव को पकड़कर बंदी बना दिया। तब जामुण्डादेवी ने भाटिनी का रूप धारण किया और कंकाली भिकारिणी का रूप धारण कर जगदेव से उसके सिर की भीक (दान) मांगी।

हूँ कंकाली भदृ, सती असती नर पेरवूं
स्वर्ग मर्त्य पाताल, देव नर नाग पेरवू
विक्रम भोज पूठै मही, जस ज्योरो मन भावियो
कंकाली कहै फुलमादी नै, थारो राव मो मन आवियो।

अर्थात् - मै कंकाली (याचक) भाटिनी हूँ (भ्रमणशील) हूँ। स्वर्ग, मृत्यु, पाताल में देव, मानव व नाग लोगों की परीक्षा करती फिरती हूँ। फुलमादी, इस पृथ्वीपर विक्रमादित्य और भोज के पश्चात जिसका यश मेरे मन को अच्छा लगा है वह तेरे स्वामी (जगदेव) का है। जगदेव ने उस भाटिनी को अपना सिर तुरंत भेट कर दिया -

सवंत इग्यारह इकाणंवै चैततीज रविवार।
सीस कंकाली भट्टनै, जगदेव दियो उतारि ॥

अर्थात - चैत्र तृतीया रविवार सम्वंत ११५१ (१०१४ ई.) के दिन जगदेव ने अपना सिर काटकर कंकाली भाटिनी को दान दिया।

कुछ वर्ष बीतने के बाद सिद्धराज ने अपने राज्य के विस्तार की लालच में जगदेव को दख्खन भेजा और मालवा पर आक्रमण करने की योजना बनाई। पूर्ण सैनिक तयारी कर धारानगरी पर हल्ला किया। यह बात गुप्तचर द्वारा जगदेव को पता चली। राजा जगदेव ने तत्काल कहा - **'धारा भीतर मै बसूं, मै भीतर है धार। जो मै चलु पिठ दे, तो लाजै जात पवॉरा।'** जगदेव तुरंत अपनी सेनादल के साथ धार पहुंचा और सिद्धराज की सेना को मार भगाया। नरवर्मन को पूर्ववत राजसिंहासन पर बिठ़ाकर वह अब कुन्तल (कर्नाटक) नरेश की राजधानी कल्याणी वर्तमान बसवकल्यान (गुलबर्गा से ४५ किमि दूर) पहुंचा। डोंगरगाव (जि.यवतमाल) अभिलेख अनुसार (श्लोक ९) चालुक्यवंशीय विक्रमादित्य षष्ठम् (११७६-११२६ई.) के राजदरबार पहुंचते ही उसका भव्य स्वागत हुआ। उसने जगदेव के वीरता व स्वामीभक्ती की ख्याती सुनी थी तथा उसे गोदावरी नदी के उत्तर स्थित प्रदेश गोंडवाना (विदर्भ-डेक्कन-(तेलंगाना) - सी.पी. एन्ड बेरार/ महाकोशल) का सुबेदार नियुक्त किया। नागपुर के सीताबर्डी से प्राप्त अभिलेख (वर्ष १०८७ ई.) से ज्ञात होता है कि गढचांदूर त.राजुरा जि. चंद्रपुर जगदेव की राजधानी थी। इसे आचार्य मेरूतुंग ने भी अपना पूर्ण समर्थन दिया है। जगदेव विक्रमादित्य षष्ठम् की मर्जी से वर्ष १०१४ ई. में इस प्राचीन गोंडवाना प्रदेश का सार्वभौम स्वतंत्र राजा बना।

तेलंगाना के आदिलाबाद समीप जैनड से प्राप्त अभिलेख में जगदेव के सेनापति दाहिमा अमात्य लोकार्क का विवरण मिलता है। श्लोक ७ से १२ में जगदेश द्वारा क्रमशः आंध्रप्रदेश, चक्रदुर्ग (बस्तर) दोरसमुद्र (मैसुर-हलेविद), पाटन (गुजरात),

त्रिपुरी चेदी नरेश (जबलपुर) ई. पर विजय संग्रामों का उल्लेख मिलता है।

परमार नरेश अर्जुन वर्मन रचित ''रासिक संजीवनी'' पृ.८ पर पाया जाता है कि जगदेव अत्यंत रुपवान था । महावीर था । सद्गुणी, सदाचारी धर्मपरायण, स्वामीभक्त था । कुन्तल नरेश ने उसकी प्रशंसा करते हुए कहा था कि ''तुम मेरे पुत्रों में प्रथम हो, राजकारण में स्वामी हो, मेरी दाहिनी भूजा हो, सभी दिशाओंमें अजेय वीर पुरुष की मूर्तिस्वरुप हो व स्वयं मेरे समान ही हो.'' (डोंगरगढ अभिलेख (१११२ई.) श्लोक ९). इसी अभिलेख में श्लोक १० में कहा गया है ''जिसके बाणों व शस्त्र बरसाने से शत्रु व याचक अपना सैनिक कौशल व वीरता की नीधि का त्याग कर निःसंकोच उसको शरण में आते है।'' श्लोक ११ बड़ा ही सुंदर है -

न स देशो न स ग्रामो न स लोको न स सभा
न तन्नकतं दिवं यत्र जगदेवो न गीयते ।।११।।

अर्थात् - ऐसा देश नही, ग्राम नही, लोक नही, सभा नही, ऐसी रात नही व दिन नही जहां जगदेव की प्रशंसा नही गाई जाती ।

भंडारा जिला गजेटिअर (संस्करण १९०८/ १९७९) के पृष्ठ ८५ पर भांदक (भद्रावती, जि.चंद्रपुर) में उनके कुलदेवता जगनारायण (बडा नाग मंदिर) से एक अभिलेख प्राप्त हुआ है एवं नागपुर संग्रहालय में रखा गया है। इस अभिलेख में जो ११०४-५ ई.का है, मंदिर की व्यवस्था के लिए जगदेव द्वारा दो ग्राम - मोखालीपतक (मोरवर) व व्यापुर (वुरगांव) पुजारी को दान देने का उल्लेख किया गया है। भांदक की पहाडी (विंद्यावासिनी) पर जैन तथा हिंदू मंदिरों के खंडहर आज भी नजर आते है कई पाषाण मूर्तिया भग्न अवस्था में विद्यमान है जो जगदेवकालीन मानी जाती है। जगदेव ने अपने राज्यकाल में सात प्रकार के सोने के सिक्के प्रचलन में लाए थे जो नागपुर व हैद्राबाद संग्रहालयों में रखे हूए है।

राजा जगदेव के बाद उसकी गादी पर उसका ज्येष्ठ पुत्र जगधवल बैठा तथा धाराधिश अर्जुनवर्मन (१२१०-१२१८) के काल तक जगदेव के वंशजों ने इस प्रदेश पर (पूर्व सी.पी.ॲण्ड बेरार) शासन किया । भंडारा जिला गजेटिअर पृष्ठ ८५ अनुसार यादव नरेश सिंघन के सेनापति खोलेश्वर की सेना ने जगदेव के अंतिम वंशज, चांदा के नरेश 'महाराज भोज' के काल में उनके राज्य पर आक्रमण कर परमार राज्य का अंत किया । चांदा के राजा भोज सेना लेकर राजस्थान की ओर निकल गया ।

उसीतरह जगदेव ने १०९४ ई. में एक पुत्र बीजधवल को उत्तरभारत के

अखनूर राजधानी के सिंहासन पर बसाकर विराट नगरी, अम्बरी का राजा बनाने का भी विवरण प्राप्त होता है । अखनूर से ५ कि.मी. दूर ग्राम धारी में उसने महल व किला बनाया था । उसके वंशजों ने ६०० साल तक यहां शासन किया ।

जगदेव को दो पुत्रियॉ थी - १. शामलदेवी की शादी मेवाड़ के राजा विजयसिंह गुहिल से हुई। २. मालव्यदेवी बंगदेश के राजा सामलवर्मन को ब्याही गई। जगदेव के अन्य पूत्र १. गुंगादेव पवार ढाक / बाडमेर के राजा, २. गहलदेव पवार धूनिया (बाडमेर), ३. काबादेव पवार रायसीन जालौर के राजा थे तथा एक पूत्र पंजाब एवम् गढवाल, उत्तराखंड में भी राज्य करता था, (पंवार वंश दर्पण - डॉ. दशरथ शर्मा)।

जगदेव की जन्मतिथि चैत चतुर्दसी सं.११०२ (१०४५ ई.) तथा मृत्यु तिथि ११३० ई. रासमाला में दी गई है । रासमाला अनुसार उसने ५२ वर्ष शासन किया । उसकी मृत्यु ८५ वर्ष उम्र में हुई । डॉ.अमरचंद्र मित्तल ने 'परमार अभिलेख' ग्रंथ में उसका पूर्वि- विदर्भ-तेलंगाना-महाकोशल प्रदेश पर राज्यकाळ १०९४ से ११३० ई. याने ३६ वर्ष दिया है । संभव है रासमाला के रचनाकार ने उसका सिद्धराज जयसिंग के राज्य में सेनापति का १८ वर्ष का (१०६०-१०७८ई.) कार्यकाल जोड दिया होगा। अन्य स्रोत जगदेव का जीवन काल १०७९ से ११५१ ई. मानते है। तथा गढचांदूर से ११२६ से ११५१ ई. राज्यकाल मानते हैं।

जगदेव की वीरता, स्वाभिमान, सदाचार, स्वामीभक्ती, दानवीरता, न्यायी व लोकाभिमुख प्रशासन ने भारतीय इतिहास में अजरामर कर दिया (डॉ. डी.सी. गांगुली कृत 'परमाराज', नागर कृत 'जगदेव पवार', तथा गहलोत कृत 'जगदेव परमार सी बात')।

जगदेवो जगदाता, जगद्देवो जगतगुरु ।
जगद्देवो जगतदाता, जगद्देवो जगप्रिय ।।
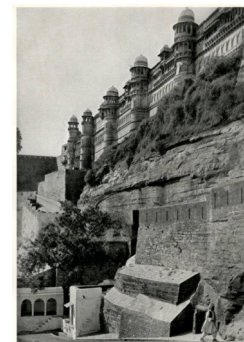
पवारी बोली

पवारों ने अपनी मातृभाषा के रूप में मालवा से इस क्षेत्र (पोवारी /भोयरी) 'पवारी बोली' अपने साथ लाई। सदियों तक वह हमारे संवाद की सशक्त भाषा रही। हमारी अक्क्षुन्न पहचान, सुख-दुख की घनिष्ठ साथी रही। उसे महान आंग्ल भाषाविद् सर जार्ज अब्राहम गिरसन, रसेल आदि ने सराहा, प्रा. डॉ. सु. बा. कुलकर्णी (१९७४ई.) ने पीएच.डी. प्रबन्ध (नागपुर विद्यापीठ) हेतु अध्ययन कर भाषा विज्ञान की दृष्टि से उसमें अनेक अलंकार, श्रृंगार, विशाल शब्द-भंडार की खोज एवं समीक्षा की तथा डॉ. मंजु अवस्थी, बालाघाट (१९९९ई.) ने इसे अपने डी.लिट्. प्रबन्ध (रायपुर विश्वविद्यालय) का विषय बनाकर पवारी लोकगीतों का मौलिक सृजन किया। इसी कड़ी में डॉ. शारदा कौशिक पवार (पांढुरना, जि.छिंदवाडा) ने ''पवारी लोकसाहित्य में जीवन मूल्य'' शीर्षक अंतर्गत अध्ययन कर बर्कतउल्ला विश्वविद्यालय भोपाल से सन २०१४ में पीएच.डी. अर्जित की।

किन्तु अफ़सोस! हमारा समाज अपनी मातृभाषा को तेज रफ्तार से परित्याग कर रहा हैं। कहते है 'भाषा समाज का आईना होता है, संस्कृति की चलती फिरती झांकी होती है,' शिशु के जबान को शब्दांकित कर हृदय की भावनाओं का मंचन प्रस्तुत करती है। वह समाज का दर्पण हम तोड़ रहे है, वाणी मरोड़ रहे है तथा शनैः शनैः हमारी सामाजिक जीवन-ज्योति प्रायः बुझने की राह पर है। आज वह ग्रामीण पवार परिवारों की पुरानी पीढ़ी की मात्र 'घर के चौखट की बोली' बनकर रह गई है। हमने शिक्षा ली, बोली छोड़ी; खेती छोड़ी, बोली छोड़ी; गांव छोड़ा, बोली छोड़ी तथा आधुनिकता की धूंद में अपनी वेशभूषा छोड़ी तो पवारी भी छोड़ दी।

पवारी बोली बुंदेली, निमाडी तथा मालवी का मिलता जुलता नवसंस्करण प्रतीत होती है। पवारी बोलीपर गुजराती, राजस्थानी, बघेली तथा मराठी भाषा का काफी प्रभाव गिरा हुआ है। इसके अलावा छिंदवाडा बैतुल जिलों में पवारों द्वारा बोली जाने वाली बोली में बुंदेली, निमाडी तथा मालवी भाषा का बहोत प्रभाव है और यह भाषा नागपुर जिले में बसे कोष्टी, छिन्दवाडा जिले में बसे कतिया समाज, चन्द्रपुर जिले के पटवा और झाड़ी मराठी तथा बालाघाट जिले के मरार जाति आदि की बोलियों से काफी साम्यता रखती है। राजस्थान के कोटा तथा आसपास बसी हुई जाति धाकड़ (धारकर) द्वारा भी पवारी के समतुल्य भाषा 'धाकड़ी' बोली जाती है।

इन सभी उदाहरणों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है, कि पवारी बोली का

अस्सी प्रतिशत शब्द समूह हिन्दी और मध्य भारतीय भाषाओं का है। ध्वनि व्यवस्था भी हिन्दी से ही जुड़ी हुई है।

पवारी की विशेषता -

(१) इस भाषा में.प्रयुक्त विभक्ति प्रत्यय में सप्तमी का 'मा' गुजराती का, षष्ठी का 'क' हिन्दी का, और चतुर्थी का 'ला' मराठी का है।

(२) 'दुन', 'लख', 'परा', 'आडपा' इत्यादि पर सर्ग राजस्थानी एवं गुजराती भाषा से साम्यता रखते है।

(३) सर्वनाम में प्रथम एवं द्वितीय पुरुषवाचक सर्वनाम जैसे 'मि', 'आमि', 'तु', 'तुमि', 'कोन', 'कोनतो' इत्यादि सर्वनाम मराठी भाषा से लिये गये हैं।

(४) उसी प्रकार तृतीय पुरुष वाचक सर्वनाम जैसे 'उ' (he), 'वा'(she), 'वय' (they) इत्यादी बुन्देली भाषा से मिलते हैं।

(५) सर्वनाम विशेषण राजस्थानी है जैसे 'असो', 'केवढो', 'तसो','कसो', आदि।

(६) क्रियापद के अनेक प्रत्यय राजस्थानी हैं उदाहरण के लिए 'से' 'सेति' 'स' आदि।

(७) भूतकाल कर्म बघेली भाषा से लिये गये है। जैसे 'लग्यो', 'पड्यो' आदि।

(८) इस बोली में पूर्व हिन्दी के अनुरूप दो ही लिंग हैं। इसके अलावा कुछ शब्द उभयलिंगी उपयोग में लाये जाते हैं।

(९) इस विश्लेषण से यह विदित होता है कि हमारी बोली कालान्तर में मूल रूप मालवी से विभिन्न प्रान्तों के संसर्ग में आने से वहाँ की भाषा से घुल मिल गई, एवं आज का वर्तमान सर्व-सम्पन्न स्वरूप स्थाई हो चुका है।

(१०) पवारी में पुल्लिंगी विशेषण ओंकारांत होते है तथा स्त्रीलिंगी विशेषण इकारान्त होते हैं। जैसे -

कारो, पिवरो, थोडो, चांगलो,

कारि पिवरि, थोडि, चांगलि.

(११) पवारी में केवल पुल्लिंग व स्त्रीलिंग होने से मराठी के कुछ नपुसंक लिंगी शब्द पवारी में पुल्लिंग बन जाते हैं, जैसे - आंगन, कनिस, घुबड, चमड़ा, जंगल, जांभुर और कुछ नपुसंक लिंगी शब्द स्त्रीलिंगी हो जाते हैं, जैसे - नाक, परसाद, सरन, मालिस आदि।

(१२) पवारी में षष्ठी का प्रत्यय 'को' और सप्तमी का प्रत्यय 'मा' होता है। जैसे - उनको नवकर, ओको भाई, हातमा कड़ा, बगिचामा फुल आदि.

पवारी बोली पर क्षेत्रीय प्रभाव - बैनगंगा तथा वर्धा क्षेत्र की पवारी बोली में कुछ क्षेत्रीय प्रभाव नजर आता है।

अ) बैनगंगा तथा वर्धा क्षेत्रीय पवारी शब्द -

बैनगंगा पवारी	वर्धा पवारी	हिंदी	बैनगंगा पवारी	वर्धा पवारी	हिंदी
आवजो	आजो	आना	आवू	आनू	आना
अनखी	आऊर	और	आपलोच	आपनोच	अपनाही
ओकोमा	ओमअ्	उसमें	अर्धो	आधो	आधा
ओला	ओखअ्	उसको	आबऽ	आभी	अभी
छप्परी	ओसारी	छप्पर	आवअ्	आनअ्	आ
उघडो	उघाडो	खुला हुआ	आवसे	आवय	आता है
अंधारो	इन्धारा	अंधेरा	आवअ् सेजन	आवअ् ह्य	आते हैं
इन्नन्	इन्नअ्	इन्होंने	माय	मा	मा
उंदिर	उन्दरा	चूहा	मि	म	मै
उठना	उठनू	उठिये	मोरो	मरो	मेरा
एक्साथी	एकसाठी	इसलिए	तोरो	तोरो	तेरा
कोनला	कोखअ्	किसको	आपलो	आपलअ्	अपना
कोन्हीसीन	कुई सी	किसीसे	खान-पीन	खानपेन	खानपान
खन्यान	खिल्ल्यान	खलिहान	उनका	उनको	उनका
चुटी	चुन्धी	चोटी	येत्रोच	येतोच	इतनाही
जासू	जाउ, हय	जाता हूँ	तु	त	तू/आप
पायरी	पायर	सीढीयाँ	तुमि	तू	तूम/आप
नवरा	लोग	पति	से	स्	है (is)
बायको	लोगनी	पत्नि	सेति	स्	हैं (are)
भात	नान्ज	पका चावल	मा	म	में (in)
आपलो	अपनो	अपना	दुन	सीन	से (then)
जरन	अग्गिन	जलन	खाल्या	खलत्	नीचे (under)
पुढअ्	आद्यअ्	आगे	हिवरो	हिरवो	हरा
आपलोको	आपुनखऽ	अपनेको			

ब) बैनगंगा तथा वर्धा क्षेत्रीय पवारी वाक्य -

नीचे दिये गये कुछ वाक्यों के अध्ययन से हमें इन दोनों स्थानों पर बोली जानेवाली पवारी बोली की साम्यता तथा भिन्नता के बारे में स्पष्ट रूप से ज्ञात हो जावेगा ।

बैनगंगा तटीय पवारी	वर्धा तटीय पवारी	हिन्दी
१. वाहाँ तीन कुत्रा सेति।	वहान् तीन कुत्रा स्।	वहाँ तीन कुत्ते हैं।
२. मोरो घर नाहान् सो से।	मरो घर नानु सो स्।	मेरा घर छोटासा है।
३. मोरो टुरा आयि से।	मरो पोरग्यो आयो स्।	मेरा लड़का आया है।
४. मोला तीन टुरि सेति।	मला तीन पोटीनुन स्।	मेरी तीन लड़कियाँ हैं।
५. तु आमला देखसेस्।	तु आम्हाला देखस्।	तू हमें देख रहा हैं।
६. मि वहाँ जासु।	म वहान जाऊस्।	मैं वहाँ जाता हूँ।
७. उ झाड़खाल्या सोव्से।	वु झाड खलत सोस्।	वह झाड़ के नीचे सोता है।
८. ढ़ोर खेतमा सेति।	ढोरनुन खेत म स्।	ढ़ोर खेत में हैं।
९. उ वहाँ उभो रव्हसे।	उ वहान उभो रव्हस्।	वह वहाँ खड़ा रहता है।
१०. तोला केत्तरा टुरा सेति।	तोला केत्ता पोरग्या स्।	तेरे कितने लड़के हैं।
११.मोला तीन टुरा सेति।	मोला तीन पोरग्या स्।	मेरे तीन लड़के हैं।
१२. खाल्या बस्।	खलत् बस्।	नीचे बैठ।
१३.तोरो भाई ला बुलाव्।	तोर भाई ला बलाव्।	तेरे भाई को बुला।
१४. मि झाड क दूर सेव।	म झाडसिन दूर स।	मै झाड़से दूर हूँ।
१५. वोनं मराठी सिकिस।	वु मराठी सिक्यो।	उसने मराठी सिखा।
१६. ओनं बाईनं पानी पियिस्।	ओनं बाईनं पानी प्यो।	उस स्त्री ने पानी पीया।
१७.पाखरइनला दुय पंख रव्ह सेति।	पक्षीनुनलाल दुय पंख रव्हस्।	तोता को दो पंख रहते हैं।
१८. मि वहां गयो।	म वहान गयो।	मै वहाँ गया।
१९. मि आब्ब सोंऊसु।	म आब सोऊस।	मैं अभी सोता हूँ।
२०. खोटो नोको बोलू।	खोटो बोलू नको।	झूठ मत बोल।
२१. वोको तोरो नातो का से।	ओको तोरो नातो का स्।	उसका तेरा रिश्ता क्या है।
२२. कवाड उघड	दरवाजो उघड।	दरवाजा खोल।
२३. ओन अभ्यास करि रहेस त पास होये	ओन अभ्यास कर्यो रहेन त् पास होयेन्।	उसने अभ्यास किया होगा तो पास होगा।
२४.पवार धारलक इतं आया।	पवार धारसिन आयो स।	पवार धार से यहां आए।
२५. पवार टुरी का पाय लगसेत।	पवार पोटीनुन पाय लग्यो स	पवार लड़की के पांव पड़ते है।

वाग्देवी स्तुति

नमो वाग्देवते तुभ्यं नमस्तुभ्यं सरस्वति ।
वाणि भाषे नमस्तुभ्यं वाङ्मि तुभ्यं नमो नमः।।

तुच गौरी सावत्री सरस्वती महादेवी माते
तुच महागौरी महालक्ष्मी महासरस्वती देवी
तुच महामाया महाकाली गढकालिका देवी
वाग्देवी माय शत-शत तोला प्रणाम ।।१।।

तुच ब्रह्मलिला विष्णुलिला शिवलिला देवी
तूच गणवाणी व्यासवाणी नारायणी देवी
तुच मनवाणी जनवाणी विद्या कला की देवी
वाग्देवी माय शत-शत तोला प्रणाम ।।२।।

तुच शब्द ब्रह्म स्वरूपिणी ॐकार वीणा वादिनी
तुच विश्वज्योति दिव्यज्योति अंधकार नाशिनी
तुच सूर्यप्रकाशिनी, चंद्रप्रकाशिनी आत्मप्रकाशिनी
वाग्देवी माय शत-शत तोला प्रणाम ।।३।।

तुच कुल देवी महामाया महानिंद्रा कालरात्री देवी
तुच ज्ञान विज्ञान विवेक बुद्धि सत्जीवन की देवी
तुच कमला शारदा कर आमरो जीवन सुखी
वाग्देवी माय शत-शत तोला प्रणाम ।।४।।

वाग्देवी जगतमाता, वाग्देवी जगत पिता
वाग्देवी जगतदात्री, वाग्देवी प्रचोदयात
वाग्देवी चरणों मा अर्पण 'मोरो अंतर्मन'
वाग्देवी माय शत-शत तोला प्रणाम ।।५।।

(भोजकृत संस्कृत रचना **वाग्देवी स्तुति** को पवारी मा भावार्थ)

***

लेखक परिचय

नाम : **डॉ.ज्ञानेश्वर बापुजी टेंभरे**
जन्मस्थल : ग्राम मेंढा, त. तिरोड़ा, जि.गोंदिया (म.रा.)
जन्मतिथि : १६ अप्रैल, १९४४
शिक्षा : एम.एस्सी., पीएच.डी.
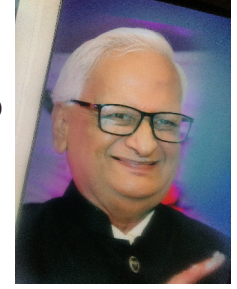
सेवा क्षेत्र

सेवाकाल : १९७३ से २००४
पद : प्राध्यापक, विभाग प्रमुख - प्राणीशास्त्र विभाग,
अधिष्ठाता , विज्ञान संकाय, नागपुर विद्यापीठ नागपुर
सदस्य - विद्यापीठ व्यवस्थापन, विद्वत तथा विधि सभा
विदेश शिक्षा संशोधन : जर्मनी -१९७६-७८, स्वीजरलैंड - १९८०,
अमेरिका - १९९०, इंडोनेशिया - २००२.
प्रकाशन : ८० शोधपत्र
०५ जीवविज्ञान पर ग्रंथ
1 Text Book of Insect Morphology Physiology and Endocrinology - 1984
2. Modern Entomology - 1997
3. Techniques in life Sciences - 2008
4. Invertebrate Endocrinology - 2012
5. Molecular Endocrinology - 2017
पीएच.डी.मार्गदर्शन - २१ शोध छात्र

सामाजिक क्षेत्र

अध्यक्ष : पवार समाज संगठन, नागपुर (१९८२-१९९६)
अध्यक्ष : राष्ट्रीय पवार क्षत्रिय महासभा (१९९९-२००६)
अध्यक्ष : राष्ट्रीय पवारी साहित्य कला संस्कृति मंडल
संस्थापक-संपादक : पवार संदेश, वार्षिक पत्रिका, (१९८४ से वर्तमान)
: पवार समाजदर्शन, न्यूजलेटर (२०००-२००६)
रचयिता : चक्रवर्ती राजा भोज (२००५-२०१८) ६ संस्करण
पवारी ज्ञानदीप (२०११)
गूंज उठे पवारी (२०१७)
दुर्वांकुर - पवारी कहानी संग्रह (२०१९)
हमारे महापुरूष (२०१९)
सामाजिक लेख : ६० (विभीन्न पत्रिकाओं में)

◆